चन्दामामा
अप्रैल १९९३
Rs
4

भारत में सर्वाधिक बिकने वाले कॉमिक्स
डायमण्ड कॉमिक्स
का 700वां कामिक्स
कार्टूनिस्ट प्राण का
चाचा चौधरी और साबू का
50वां गोल्डन जुबली अंक
चाचा चौधरी और ट्रिपल नाइन
चाचा चौधरी और ट्रिपल नाइन
मुफ्त
5/- रु. का
चाचा चौधरी
का मैग्नेट
स्टिकर
इस माह के अन्य कॉमिक्स
फौलादी सिंह और
डा. जान का आतंक
स्पाईडर मैन-1
मोटू और बर्फ का दैत्य
पलटू और
गंजू की बन्दूक
डायमण्ड कॉमिक्स डाइजेस्ट
मैण्ड्रेक-11
चाचा भतीजा
और शीशे का लोटा
डायमण्ड कामिक्स प्रा. लि. 2715, दरियागंज, नई दिल्ली-110002

Mudra:LI:205:93

मनोज कॉमिक्स का

फ्री लक्की बम्पर ड्रा

रुपये

निम्न 24 कॉमिक्स पढ़िये और जीतिए

3,00,000.00

तीन लाख रुपये के आकर्षक इनाम

- प्रथम (एक) पुरस्कार मारुति कार 800 सी. सी. स्टैंडर्ड
- द्वितीय (एक) पुरस्कार हीरो होण्डा
- तृतीय (एक) पुरस्कार कलर टी.वी. 20"
- चतुर्थ (एक) पुरस्कार दिल्ली से नेपाल की यात्रा के दो रिटर्न एयर टिकट
- पंचम (पचास) पुरस्कार स्पोर्ट्स साइकिल

जादूगर कोबरा	देवता का प्याला	विनाशदूत करकेंटा	अजगर दी ग्रेट	आंख से टपका खून	आकाश का जादूगर	शैतान का टोप	इच्छाध... राम...
फिर आया ड्राक्युला	यम की तलवार	ड्राक्युला का प्रेतजाल	कुबड़ा शैतान	मुर्दा नं. 402	कंकाला जादूगरनी	हम शैतान हैं	कब्रिस्त... की घ...
त्रिकालदेव और गजालू का चक्रव्यूह	त्रिकालदेव और काली खोपड़ी	त्रिकालदेव और पिशाचराज	चार सिर शैतान के	खूनी दानव की वापसी	ड्राक्युला आया मौत लाया	हवलदार बहादुर और नौ अजूबे	हवलदार ब... और साठ ल... का बक...

आवश्यक नोट

उपरोक्त चौबीस कॉमिक्स की बैक पर "फ्री लक्की ड्रा कूपन" छपा है। जब आप चौबीस कॉमिक्स पढ़ लें तो चौबीस कूपन एक साथ इकट्ठे करके भेजें। उन चौबीस कूपनों को एक साथ ड्रा में शामिल करके ड्रा निकाला जाएगा। कृपया अलग-अलग कूपन न भेजें।

इनाम कैसे प्राप्त करें

1. उपरोक्त चौबीस कॉमिक्स के टाइटल की बैक पर लक्की ड्रा कूपन छापा गया है। इन चौबीस कॉमिक्स के कूपन काटकर व उनकी बैक पर साफ-साफ शब्दों में अपना नाम व पूरा पता लिखकर भेजें।
2. आपके चौबीस लक्की ड्रा कूपन हम तक 30 जुलाई 1993 तक अवश्य पहुंच जाने चाहिए।
3. ड्रा 15 अगस्त 1993 को निकाला जाएगा।
4. 30 जुलाई के बाद प्राप्त होने वाले कूपनों को ड्रा में शामिल नहीं किया जाएगा।
5. चौबीस कूपन एक साथ भेजने वालों को ही इस लक्की ड्रा में शामिल किया जाएगा।
6. लक्की ड्रा के विजेताओं को उनके पुरस्कार 30 सितम्बर 1993 तक भेज दिये जायेंगे।
7. लक्की ड्रा के कूपन "मनोज पॉकेट बुक्स" 5 17बी,रूपनगर, दिल्ली 110007 के पते पर भेजें।
8. अपने लक्की ड्रा कूपन साधारण डाक द्वारा ही भेजें।
9. मनोज पॉकेट बुक्स के कर्मचारी अथवा उनके परिवार के सदस्यों को छोड़कर, सभी भारतीय निवासी इस प्रतियोगिता में भाग ले सकते हैं।
10. प्रथम चार विजेताओं के नाम व फोटो अक्टूबर माह में प्रकाशित राम-रहीम के नये कॉमिक्स 'शेष नाग का खजाना' में प्रकाशित किये जायेंगे और पाँचवें पुरस्कार के पचास विजेताओं के नाम भी इसी कॉमिक्स में छापे जायेंगे।

ચાંદામામા
চাঁদমামা
చందమామ
चांदोबा
அம்புலிமாமா
CHANDAMAMA
चन्दामामा
ಚಂದಮಾಮ

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'

संचालक : नागिरेड्डी

शांति की शताब्दी

३ जनवरी एक ऐतिहासिक दिवस था । उस दिन अमरीका और रूस ने अपने-अपने यहां जमा किये गये परमाणु अस्त्रों की संख्या कम करने के लिए एक समझौते पर हस्ताक्षर किये । अमरीका की ओर से हस्ताक्षर करने वाले थे वहां के तत्कालीन राष्ट्रपति ज्यार्ज बुश और रूस की ओर से हस्ताक्षर किये वहां के राष्ट्रपति येल्सतिन ने । ज्यार्ज बुश उन दिनों मास्को में ही थे, और यह उनकी विदाई-यात्रा थी । समझौते को स्टार्ट-II की संज्ञा दी गयी । अगले ही दिन सभी समाचार-पत्रों ने अपने पहले पन्ने पर इस समाचार को प्रमुखता से प्रकाशित किया । तुम जानते हो कि अमरीका के नये राष्ट्रपति बिलक्लिंटन ने २० जनवरी को कार्य भार संभाला था ।

दरअसल, ३ जनवरी की सुबह को दोनों राष्ट्रपति अपनी पत्नियों से अपने दिन की शुरुआत क्रेमलिन के उस भाग से की जहां सैकड़ों बच्चे नया वर्ष मनाने के लिए इकट्ठे थे । जब ये उनमें शामिल होने के लिए वहां पहुंचे तो उन्हें सुखद आश्चर्य हुआ । उत्सव के संचालक ने उनका परिचय देते हुए कहा: "बच्चो, आज एक अद्भुत समझौते पर हस्ताक्षर होंगे । इस समझौते से हम सब का जीवन आसान हो जायेगा ।" फिर उसने उस समझौते के विवरण दिये । अगर उन नन्हे श्रोताओं को उन नेताओं से आराम से बात करने का अवसर मिलता तो वे एक प्रश्न ज़रूर उठाते, और वह प्रश्न होता : वे उन अस्त्रों को भी क्यों रखना चाहते हैं?

अमरीका के राष्ट्रपति ने इस समझौते को 'निःशस्त्रीकरण का सपना ले रही मानव जाति की आशा' कहा, जब कि रूसी नेता ने कहा कि इससे 'समूचे संसार को सुरक्षा की प्रत्याभूति' मिलेगी ।

आने वाली पीढ़ी विश्व की इन दो महान शक्तियों से 'पूर्ण निःशस्त्रीकरण' और साथ में 'स्थायी विश्व शांति' की आशा करती है । युद्ध का विचार पहले आदमी के मस्तिष्क में ही तो उठता है । अगर यह सच है तो क्या इस मस्तिष्क से इस विचार को पूरी तरह निकाला नहीं जा सकता? आओ, हम सब मिलकर कामना करें कि अगले दस वर्षों में 'शांति की शताब्दी' का युग शुरू होगा ।

वर्ष : ४५ | अप्रैल १९९३ | अंक : ८

एक प्रति : रु. ४/- | वार्षिक चन्दा : रु. ४८/-

अपने प्यारे चहेते के लिए जो हो दूर सुदूर
है न यहाँ अनोखा उपहार जो होगा प्यार भरपूर

चन्दामामा

प्यारी-प्यारी सी चंदामामा दीजिए उसे उसकी अपनी पसंद की भाषा में—
आसामी, बंगला, अंग्रेजी, गुजराती, हिन्दी, कन्नड
मलयालम, मराठी, उड़िया, संस्कृत, तमिल या तेलुगु
—और घर से अलग कहीं दूर रहे उसे लूटने दीजिए घर की मौज-मस्ती

चन्दे की दरें (वार्षिक)

आस्ट्रेलिया, जापान, मलेशिया और श्रीलंका के लिए

समुद्री जहाज़ से रु. **105.00** वायु सेवा से रु. **252.00**

फ्रान्स, सिंगापुर, यू.के., यू.एस.ए.,
पश्चिम जर्मनी और दूसरे देशों के लिए

समुद्री जहाज़ से रु. **111.00** वायु सेवा से रु. **252.00**

अपने चन्दे की रकम डिमांड ड्राफ्ट या मनी ऑर्डर द्वारा
'चन्दामामा पब्लिकेशन्स' के नाम से निम्न पते पर भेजिए:

सर्क्युलेशन मैनेजर, चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६.

दो नये राष्ट्र

३१ दिसंबर की रात को नये वर्ष के आगमन के साथ-साथ दो नये राष्ट्रों का भी जन्म हुआ। ये राष्ट्र थे चेक तथा स्लोवाकिया गणराज्य। उनके जन्म का अर्थ था चेकोस्लोवाकिया का विश्व के मानचित्र से एक इकाई के रूप में लुप्त हो जाना।

२० दिन के बाद ही ये दोनों गणराज्य संयुक्त राष्ट्र संघ के पूर्ण सदस्य बन गये, जिससे संघ में सदस्य राष्ट्रों की संख्या १८० हो गयी।

चेकोस्लोवाकिया का जन्म १९१८ में आस्ट्रियाई साम्राज्य के पतन के परिणाम-स्वरूप हुआ। इसमें बोहीमिया तथा मोराविया एवं साइलेशिया और रूथेनिया के कुछ भाग शामिल थे और ये भाग अस्ट्रिया के अधिकार में थे। नये राष्ट्र की अगवानी की टॉमस गेरिग मैसारिक तथा एड्वर्ड बेनिस ने। मैसारिक उसी वर्ष राष्ट्रपति बन गया और १९३५ तक राष्ट्रपति के पद पर बना रहा। उसके बाद बेनिस राष्ट्रपति बना।

तब तक जर्मनी के एडोल्फ हिटलर की विस्तारवादी निगाहें चेकोस्लोवाकिया की तरफ मुड़ गयी थीं और उसे ब्रिटेन, फ्रांस तथा इटली से अनुमति मिल गयी कि वह सुडेटन लैंड के हिस्से को अपने में मिला ले। यह काम १९३८ में पूरा हुआ। अगले वर्ष उसने समूचे देश पर ही धावा बोल दिया। इसके बाद वह सितंबर के महीने में पोलैंड में घुस गया जिससे दूसरा विश्व-युद्ध भड़क उठा। बेनिस को मजबूर होकर लंदन में रहकर अपनी सरकार चलानी पड़ी।

१९४५ में जब संयुक्त कमान (अलाइज़) ने नाज़ी जर्मनी को पराजित किया तो पश्चिम में युद्ध तो खत्म हो गया, लेकिन यह देश सोवियत संघ के प्रभाव में आ गया। १९४८ में एंटोनिनन नोवोटिनी के नेतृत्व में कम्यूनिस्ट सत्ता में आ गये, लेकिन युद्ध के परिणामस्वरूप यहां की अर्थव्यवस्था क्योंकि छिन्न-भिन्न हो चुकी थी, इसलिए लोग उदार नीति की मांग करने लगे। आखिर, नोवोटिनी का तख्ता पलट दिया गया और १९६८ में सुधारवादी दौर शुरू हुआ। इन सुधारवादियों का नेता एलेक्ज़ैंडर डुबचेक था। लेकिन डुबचेक के सुधार अति की सीमा को छूने लगे थे जो "बड़े भैया" को बर्दाश्त न हुए। परिणामस्वरूप सोवियत संघ के नेतृत्व में वारसा संधि की सेना ने चेकोस्लोवाकिया पर अपना कब्ज़ा ज़मा लिया और डुबचेक

को इस्तीफा देना पड़ा । तब से ही यूरोप के इस राष्ट्र में परिवर्तन की हवा चल रही थी । यहां की जनसंख्या दो-तिहाई चेक थी और बाकी एक-तिहाई में स्लोवाक, जर्मन, पोल, हंगेरियन तथा दूसरे अल्पसंख्यक शामिल थे । उन्हें लगा कि बहुसंख्यक उनका गला घोंट रहे हैं । इसलिए उन्होंने अलग और स्वाधीन होना चाहा ।

१७ जुलाई १९९२ को स्लोवाक के गणराज्य ने अपनी प्रभुसत्ता की घोषणा कर दी । लेकिन ज़्यादातर स्लोवाक अलग होने के पक्ष में नहीं थे । इसलिए यह प्रस्ताव सामने आया कि दोनों गणतंत्रों में जनमत करवाया जाये और उसके बाद ही आखिरी फैसला हो ।

नवंबर में इन दोनों गणराज्यों की राष्ट्रीय संसदों ने इस प्रस्ताव को नामंजूर कर दिया और इसके साथ ही संघीय संसद से अनुरोध किया कि वह चेकोस्लोवाक संघ को भंग करने के लिए संविधान में संशोधन करे । संघीय संसद ने नये वर्ष से विभाजन को मंजूरी दे दी ।

१५ जनवरी को दोनों राष्ट्रों के विदेश मंत्री अपने-अपने यहां (प्राग तथा ब्राटीस्लावा) से संयुक्त संघ में प्रवेश पाने के लिए प्रार्थना-पत्र लेकर न्यूयार्क पहुंचे । प्रवेश मिलने पर मिलान नाजको का कहना था : "इस पावन दिवस पर हम स्लोवाकिया के इतिहास का नया अध्याय शुरू कर रहे हैं ।" और जोसफ जिलेनिक का कहना था : "चेक गणराज्य मानव अधिकार और स्वतंत्रता के सिद्धांतों में अपना विनम्र योग देगा ।"

नारायण और नारियल

एक युवक था बलभद्र । उसने गुरुकुल में शिक्षा ली । शिक्षा प्राप्त करने के बाद वह अपने गांव में लौट आया था ।

बलभद्र का पिता एक विद्वान व्यक्ति था । वह खेती करने के साथ-साथ लेखन-कार्य भी किया करता था । उसने चाहा कि बलभद्र भी उसके साथ रहे और उसके लेखन-कार्य में मदद करता रहे । वास्तव में बलभद्र का पिता किन्हीं संस्कृत ग्रंथों का हिंदी में अनुवाद कर रहा था, और जैसे-जैसे वह कुछ काम पूरा करता था, उसे वह शहर में एक ज़मींदार के यहां भिजवा देता था । ज़मींदार उसके बदले में उसे अच्छा-खासा पारिश्रामिक देता था ।

बलभद्र को भी यह काम अच्छा लगा । उसके सहयोग से अब यह काम और गति पकड़ गया था । इधर पिता और पुत्र ने मिलकर हंस पुराण का अनुवाद बहुत जल्दी पूरा कर लिया था ।

अनुवाद जब पूरा हो गया तो बलभद्र के पिता ने उससे कहा, "बेटा, ज़मींदार को खुद ही पहुंचा आओ । इसे देखकर वह बहुत खुश होगा, क्योंकि अभी तक इस ग्रंथ का कोई भी पंडित अनुवाद नहीं कर सका था । यह कार्य उनके लिए असाध्य था ।"

अनुवाद को लेकर बलभद्र शहर के लिए निकल पड़ा । रास्ते में उसे एक व्यक्ति मिला । वह उससे बोला, "तुम बलभद्र ही हो न? काफी बड़े हो गये हो । लगता है खूब पढ़-लिख भी गये हो । है न? क्या कहीं जा रहे हो? कहां जा रहे हो?"

बलभद्र उसके प्रश्नों का उत्तर तो देता रहा, लेकिन उसे याद नहीं पड़ रहा था कि इस व्यक्ति से वह कहां मिला है ।

बलभद्र की असमंजस को उस व्यक्ति ने समझ लिया । बोला, "अरे, भूल गये

क्या? मैं नारायण हूं। मुझे ठीक से देखो। कुछ याद आया?"

बलभद्र को याद आ गया। यह नारायण बहुत पहले बच्चों को इकट्ठा करके उन्हें अच्छी-अच्छी कहानियां सुनाया करता था। उन बच्चों में बलभद्र भी था। कहानी अभी चल ही रही होती कि नारायण की पत्नी कहीं से आ जाती और उसे डांटते हुए बच्चों को वहां से भगा देती। पर नारायण किसी-न-किसी तरह बच्चों को फिर इकट्ठा कर लेता और अधूरी रही कहानी को पूरा कर देता। कहानी में कहां रुकावट आयी थी, यह बात बच्चों की अपेक्षा नारायण को ज़्यादा याद रहती।

इसके बावजूद बलभद्र नारायण को पहचान न सका। उसे अपने पर अफसोस भी हुआ।

इस पर नारायण हंस दिया और कहने लगा, "अच्छा, छोड़ो यह बात। अगर तुम कल शाम तक शहर से लौट आने वाले हो तो मेरे लिए वहां से एक नारियल ले आना। परसों सुबह भगवान् की पूजा में वह नारियल फोड़ना होगा, और हमारे गांव के नारियल अच्छे नहीं होते।"

"आपके लिए कल शाम तक एक नारियल ज़रूर आ जायेगा। आप आश्वस्त रहें।" बलभद्र ने कहा।

फिर भी नारायण ने कहा, "भूलना नहीं, गांव में मैं जिस किसी से कोई काम करने को कहता हूं, वह हां में सर तो हिला देता है, लेकिन उसे करता नहीं। कम से कम तुम उनकी तरह नहीं करोगे, ऐसा मेरा विश्वास है।"

बलभद्र ने हंस कर वचन दिया कि अगली शाम तक उसे एक नारियल ज़रूर मिल जायेगा।

उस दिन शाम होते-होते बलभद्र शहर पहुंच गया और सीधा ज़मींदार के यहां ही गया, और वहां उसने ज़मींदार के हाथ में हंस पुराण का वह अनुवाद थमा दिया।

अनुवाद की पांडुलिपि पाकर ज़मींदार ने आश्चर्य से पूछा, "इतनी जल्दी यह काम कैसे पूरा हो पाया?"

उत्तर में बलभद्र ने गुरुकुल में पायी अपनी शिक्षा और पिता के काम में हाथ बंटाने के बारे में संक्षेप में बताया।

ज़मींदार ने उसे एक श्लोक सुनाकर कहा कि वह उसका अर्थ बताये ।

बलभद्र ने उत्तर दिया कि इस श्लोक के एक नहीं, अनेक अर्थ हैं, और इसके साथ ही उसने उसके अठारह अर्थ बता दिये ।

एक श्लोक के इतने अर्थ सुनकर ज़मींदार आश्चर्य से भर गया और बोला, "तुम तो एक असाधारण विद्वान हो । अगर तुम यहां चार-एक दिन रुको तो मैं यहां एक विद्वत्सभा का आयोजन करना चाहता हूं ।"

बलभद्र को नारायण के नारियल की बात याद थी । वह समझ नहीं पा रहा था कि ज़मींदार को वह बात कैसे बताये । उसने नारायण को वचन दिया था, और वह यह कतई नहीं चाहता था कि उसकी वजह से नारायण की पूजा में बाधा पड़े । लेकिन एक नारियल की खातिर ज़मींदार के प्रस्ताव को ठुकरा देना भी उसे ठीक नहीं लगा ।

आखिर, उसे एक उपाय सूझा । वह ज़मींदार से बोला, "महोदय, मेरी नानी स्वस्थ नहीं है । मुझे कल शाम तक उसके लिए दवाई ले जानी है । इसलिए मेरे लिए गांव लौटना बहुत ज़रूरी है ।"

"बस, इतनी-सी बात है । वह दवा क्या है, मुझे बताओ, मैं उसे ठीक-ठाक अपने आदमी के ज़रिये तुम्हारे घर भिजवा दूंगा," ज़मींदार ने कहा ।

बलभद्र घबरा गया । कहने लगा, "महोदय, मेरी नानी की अस्वस्थता मानसिक है । वह मेरे कारण ही मेरी अनुपस्थिति में अस्वस्थ हो जाती है । इसलिए मैं स्वयं उसके पास रहकर उसे यह दवा पिलाऊंगा । यह

दवा तभी काम करेगी । वैद्य का ऐसा ही कहना है ।"

ज़मींदार ने उससे बहस करना ठीक नहीं समझा । उसने उसके रात को ठहरने और खाने-पीने का प्रबंध कर दिया, और उससे कहा कि अगले दिन लौटते समय वह उससे मिलकर जाये ।

उस रात बलभद्र ने आराम किया और सुबह होते ही नारियल खरीदने के लिए बाजार में जा पहुंचा । लेकिन बाजार में नारियल की उसे कोई दुकान नहीं दिखी । नारियल का एक व्यापारी था जो मर चुका था, इस पर वे दुकानें बंद थीं ।
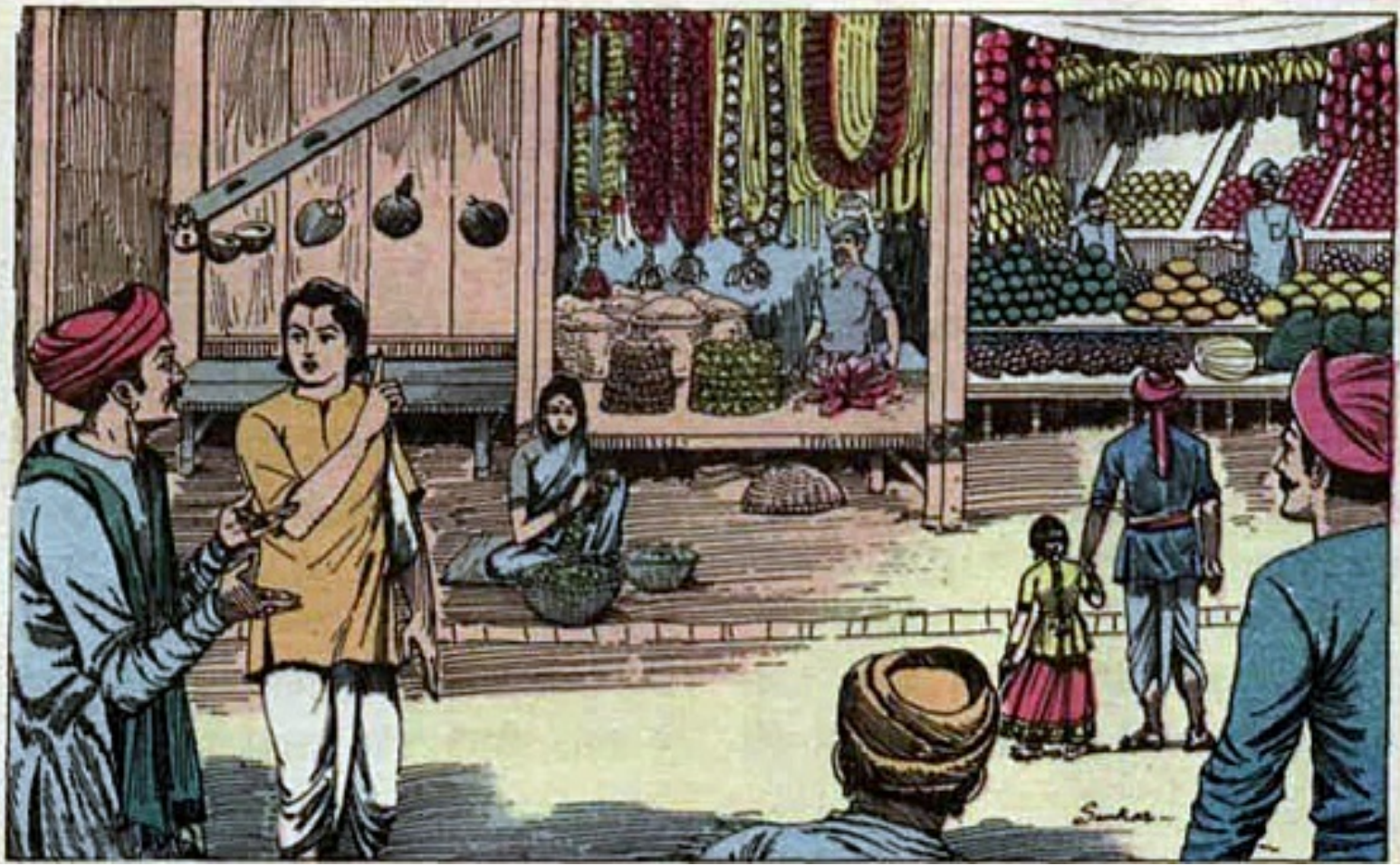
वह वापस ज़मींदार के यहां चला आया । वहां उसने रसोइये से कहा कि उसे एक नारियल चाहिए । रसोइये ने कहा, "यहां नारियलों से भरा एक बोरा पड़ा है, लेकिन ज़मींदार के आदेश के बिना मैं किसी को एक नारियल भी नहीं दे सकता । पर अगर तुम ज़मींदार से एक नारियल मांगते हो तो यह भी अच्छा नहीं लगेगा । इतने बड़े आदमी से इतनी छोटी-सी चीज़ मांगना ठीक नहीं ।"

लेकिन बलभद्र के मन में तो नारायण को दिया गया वचन चक्कर काट रहा था । इसलिए वह ज़मींदार के पास गया और उससे बोला, "मेरी नानी को नारियल बहुत पसंद हैं, और बाजार में आज एक भी नारियल नहीं है ।"

"बस, इतनी छोटी सी बात पर परेशान हो! पहले ही मांग लेते ।" और यह कहकर ज़मींदार ने उसे दस हजार रुपये और चार नारियल देकर विदा किया ।

जब तक बलभद्र अपने गांव में पहुंचा, रात हो चुकी थी । उसने अपने पिता को वह राशि सौंप दी और उसे विस्तार से बताया कि वहां क्या-क्या घटा ।

तब पिता ने पुत्र से कहा, "ज़मींदार ने आज तक किसी भी ग्रंथ के लिए इतनी बड़ी रकम किसी को नहीं दी । लगता है वह तुमसे बहुत ज्यादा प्रभावित हैं । विद्वत्सभा में अगर तुमने भाग लिया होता, तो तुम्हें अवश्य वह मालामाल कर देता । जो कुछ तुमने किया है, वह ठीक नहीं ।"

"गुरुकुल में मुझे बताया गया था कि धन से ज्यादा कीमत वचन रखता है ।" बलभद्र

ने कहा । "जो धन हमें मिलना है, वह कभी न कभी ज़रूर मिल जायेगा ।"

"लेकिन नारायण जैसे व्यक्ति के लिए जो कुछ तुमने किया, वह मुझे बुरी तरह खटक रहा है ।" बलभद्र के पिता ने कहा । "तुम्हें पहले यह जान लेना चाहिए था कि तुम जो काम करने जा रहे हो, उनमें कौन सा ज्यादा ज़रूरी है । ऐसा नहीं करोगे तो जीवन में हमेशा मुश्किलों का सामना करते रहोगे ।"

बलभद्र अपने पिता की बात का मर्म समझ गया । लेकिन जो हो चुका था, उसका वह क्या करे! अब तो आगे की सोचनी होगी ।

खैर, नारायण के यहां उसे नारियल तो पहुंचाना ही था । लेकिन जब वह उसके यहां पहुंचा तो उसे वहां ताला लगा मिला । पड़ोस में पूछताछ की तो पता चला कि जब से उसकी पत्नी का देहांत हुआ है, उसकी यही हालत है । वह कब आयेगा, और कब चला जायेगा, यह बता पाना असंभव है ।

बलभद्र थोड़ी देर तक नारायण के घर के चबूतरे पर बैठा रहा । पर जब नारायण नहीं आया तो उसने एक कागज पर लिख कर छोड़ दिया कि वह उसके लिए नारियल ले आया है ।

अगले दिन सुबह तक भी जब नारायण नारियल लेने नहीं आया तो बलभद्र फिर उसके घर गया । वहां अब भी ताला पड़ा था । मंदिर में जाकर पुजारी से पूछा तो पुजारी ने कहा कि नारायण वहां नहीं आया । पुजारी को बलभद्र ने बताया कि वह नारायण के लिए नारियल ले आया है, और यह सूचना नारायण तक पहुंच जानी चाहिए ।

दोपहर हुई तो बलभद्र फिर नारायण के
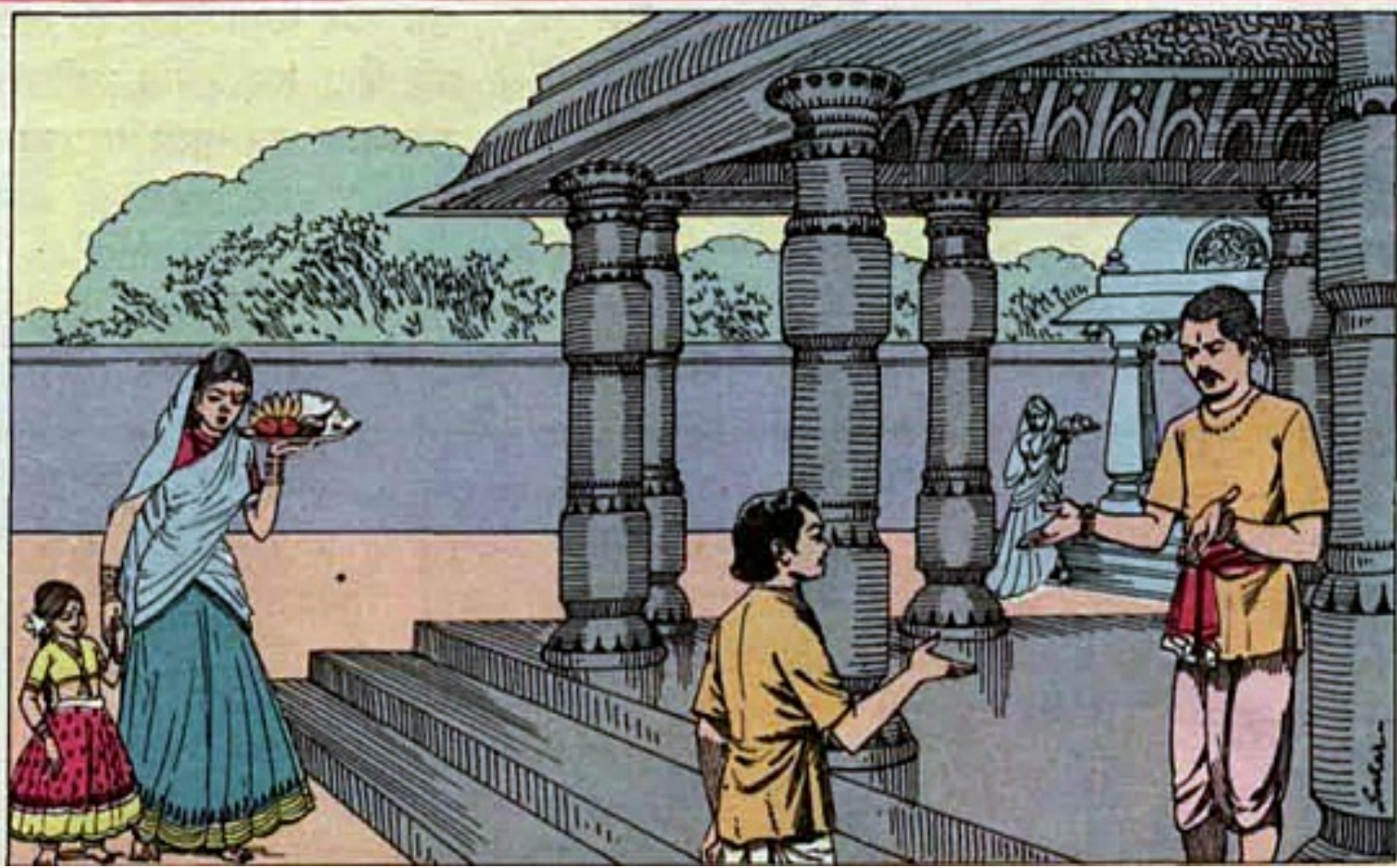
यहां जा पहुंचा । धूप कड़ी थी । बलभद्र जब वहां पहुंचा तो नारायण कोई पुस्तक पढ़ रहा था । बलभद्र को देखकर वह एकदम झुंझला उठा और कहने लगा, "मुझे यह बिलकुल अच्छा नहीं लगता कि जब मैं पढ़ रहा होऊं तो कोई मेरे पढ़ने में विघ्न डाले । बोलो, तुम्हें क्या चाहिए?"

"आपके लिए मैं कल रात यहां आया था । आज सुबह भी आया । अब फिर आया हूं । कल रात भी आपके यहां ताला पड़ा था और आज सुबह भी । क्या आप कल कहीं चले गये थे?" बलभद्र ने जानना चाहा ।

"मैं कहीं नहीं गया था । यहां आने वालों से बचने के लिए मैं सामने ताला लगाकर घर के पिछवाड़े में जा बैठता हूं ।"

"ओह! यह बात है! तो आज आपने सवेरे भगवान के सामने नारियल नहीं फोड़ा?" बलभद्र ने प्रश्न किया ।

"यह कोई बड़ी बात नहीं । नारियल होता है तो फोड़ लेता हूं, नहीं होता तो नहीं फोड़ता । फिलहाल, मेरी तबीयत ठीक नहीं है । वैद्य ने कहा है कि रोज मैं थोड़ा-सा उग्र भस्म मुंह में डाल लिया करूं । अगर तुम कभी शहर जाओ तो मेरे लिए थोड़ा भस्म लेते आना," नारायण ने कहा ।

नारियल बलभद्र के हाथ में ही था । उसे देखकर भी नारायण ने कुछ नहीं कहा । इस पर बलभद्र आवेश में आ गया, और उसने वह नारियल नारायण के सामने रखते हुए कहा कि उसे पता होना चाहिए कि इसे लाने के लिए उसने कितना श्रम किया है ।

इस पर नारायण बोला, "बेटा, मैं भुलक्कड़ नहीं हूं । लेकिन यह पहली बार है जब मेरी बात किसी ने रखी है । तुम नारियल ले आये हो, इससे मैं आश्चर्य में पड़ गया हूं । खैर, जो हुआ सो हुआ, उसे तुम भूल जाओ । हां, उग्र भस्म तुम नहीं लाना । किसी और को लाने के लिए कहूंगा, क्योंकि वह बहुत कीमती है ।"

नारायण की बात सुनकर बलभद्र एकदम चौंक उठा । उसे अब अपने पिता की बात समझ में आ गयी थी । अब उसकी कोशिश यही थी कि भविष्य में वह पहले यह जान ले कि कौन सा काम ज़्यादा ज़रूरी है, और कौन सा कम ।
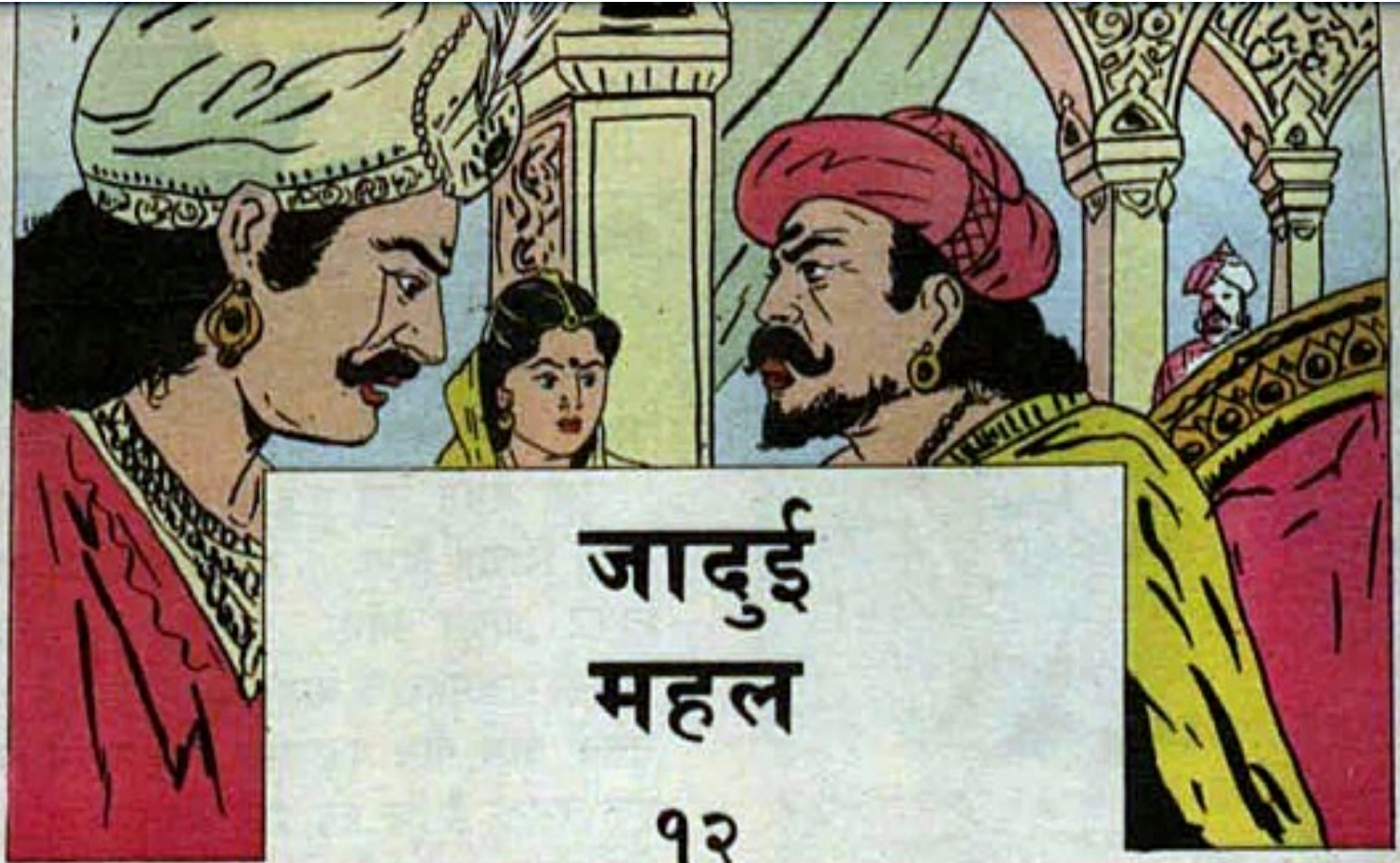
जादुई महल

१२

[जादुई महल से बचकर युवरानी विद्यावती और युवक महेंद्रनाथ संध्या होते-होते पहाड़ों के आंचल में मुनि जितेंद्रनाथ की कुटिया तक जा पहुंचे। उन्हें देखकर मुनि बहुत खुश हुआ और उसने उन्हें अपनी कहानी बता दी। इससे महेंद्रनाथ को यह पता चल गया कि मुनि उसका चाचा जितेंद्रनाथ ही है। उसी समय युवरानी विद्यावती को भी पता चला कि महेंद्रनाथ वास्तव में एक राजकुमार है। मुनि जितेंद्रनाथ, युवक महेंद्रनाथ और युवरानी विद्यावती अब आश्रमवासियों के वेश में वहां से निकले और वीरगिरि के लिए चल पड़े।–अब आगे पढ़ो।]

युवरानी को अदृश्य हुए दो सप्ताह बीत चुके थे। उसका अब तक कोई अता-पता न था। राजा और रानी, दोनों, काफी चिंतित थे। आचार्य वाचस्पति को फिर बुलवाया गया और उससे कहा गया कि पत्री देखकर वह युवरानी के ग्रहों की ताज़ा स्थिति बताये।

आचार्य वाचस्पति ने राज-दंपति को प्रणाम किया और अपना आसन ग्रहण करके युवरानी के ग्रहों की स्थिति एकं बार वह फिर बड़े ध्यान से देखने लगा।

सेनाधिपति उग्रसेन भी वहां मौजूद था। उसने आचार्य वाचस्पति से कहा, "आचार्य, क्या आपको आचार्य जगतपति के बारे में कुछ पता चला?"

राजा ने भी आचार्य वाचस्पति से लगभग वैसा ही प्रश्न किया, "आचार्य, क्या आपको पता चला कि आचार्य जगतपति ने दूसरे

ज्योतिषियों के साथ किस विषय पर विचार-विमर्श किया था?"

"आज तक कुछ भी पता नहीं चला, राजन् । मैंने अपने शिष्य मंजुनाथ को इसके बारे में पता लगाने को भेजा था । वह कल या परसों तक कुछ-न-कुछ समाचार ज़रूर लायेगा । खास बात यह है कि युवरानी की पत्री के अनुसार अब उसका शुभ समय शुरू हो गया है । उसके ग्रह यह कहते हैं कि उसे अब तक राजधानी में पहुंच जाना चाहिए था ।" आचार्य वाचस्पति ने बड़े संतुष्ट भाव से कहा ।

"आपने यह बड़ा शुभ समाचार सुनाया है, आचार्य, मैं भगवान से बराबर यही प्रार्थना कर रही हूं कि वह सकुशल लौट आये," रानी वज्रेश्वरी के मुंह से निकला । उस समय उसका स्वर भर्राया हुआ था ।

"उग्रेसन, नगर के प्रमुख मार्गों पर सभी सैनिकों को एकदम सावधान कर दो ।" राजा ने आदेश दिया ।

"जैसी आपकी आज्ञा ।" कहकर उग्रसेन वहां से बाहर चल दिया ।

उसी समय उसे एक सैनिक सामने से आता दिखाई दिया । वह सेनाधिपति के निकट आकर बोला, "अभी-अभी एक पालकी राजमहल के बाहर आकर रुकी है । उसके साथ तीन घुड़सवार हैं । उनमें से एक कहता है कि वह इसी वक्त राजा से भेंट करना चाहता है ।"

"अच्छा । उसने अपना नाम क्या बताया?" उग्रसेन ने पूछा ।

"कुछ नहीं बताया, मालिक । लेकिन देखने में वह किसी राज-परिवार से लगता है ।" सैनि ने कहा ।

"और उस पालकी में कौन है?" उग्रसेन ने पूछा ।

"मैं नहीं जानता, मालिक ।उस पर परदा गिरा है ।" सैनिक बोला ।

"ठीक है । तुम जाओ । मैं अभी आता हूं ।" और यह कहकर सेनाधिपति फिर राजमहल के भीतर गया । राजा और रानी अब तक ज्योतिषाचार्य से बातें कर रहे थे ।

सेनाधिपति उग्रसेन ने राज-दंपति को पालकी और घुड़सवारों के आने की खबर दी । तब रानी ने राजा से कहा, "प्रभु, हो

सकता है उस पालकी में हमारी बेटी ही हो । साथ में आया घुड़सवार कोई राजकुमार हो सकता है । आइए, हम चलकर देखें ।"

राजा कुछ सोचने लगा । फिर बोला, "अगर उस पालकी में हमारी बेटी होती तो वह अब तक उसी में क्यों बैठी रहती? राजमहल उसके लिए कोई नया तो है नहीं ।"

फिर भी राजा अपने स्थान से उठा, और वे चारों महल से बाहर की ओर चल दिये । वे जब तक बाहर पहुंचे, तब तक पालकी उतारी जा चुकी थी और उन तीन घुड़सवारों में से एक घुड़सवार आगे बढ़ आया था । उसने झुककर राजा का अभिवादन किया ।

उसे देखते ही राजा वीरसेन के मुंह से निकला, "तुम, तुम कौन हो?"

तभी उस घुड़सवार ने कहा, "हिमगिरि राज्य पर शासन कर चुके राजा त्रिलोकपति का मैं पोता हूं ।"

"हिमगिरि का राजा तो उमापति है । है न?" राजा ने संदेह व्यक्त करते हुए कहा ।

"हां, महाराज । उस उमापति ने राजा त्रिलोकपति को सिंहासन से हटाकर उस पर अपना कब्ज़ा कर लिया था । मैं त्रिलोकपति के छोटे भाई कैलासपति के बेटे का बेटा हूं । जब उमापति ने हिमगिरि के सिंहासन को अपने कब्ज़े में ले लिया, तब पितामह कैलासपति और अपने पिता गजपति के साथ मैं भी राज्य छोड़कर हिमगिरि से बाहर चला गया । मेरा नाम जगतपति है ।" घुड़सवार

ने रौबीले स्वर में कहा ।

जगतपति का नाम सुनकर एक बार तो राजा वीरसेन तथा आचार्य वाचस्पति चौंक उठे । फिर वे एक दूसरे की ओर देखने लगे । सेनाधिपति उग्रसेन का हाथ अपनी तलवार की मूठ तक पहुंच गया था ।

"मैं आपके लिए एक बड़ी अच्छी खबर लाया हूं, महाराज । आपकी बेटी विद्यावती सुरक्षित है । वह इसी पालकी में है ।" और घुड़सवार ने पालकी की ओर इशारा किया ।

"क्या मेरी प्यारी बेटी इस पालकी में है?" रानी एक पग आगे बढ़ने को हुई ।

लेकिन राजा ने उसे अपनी आंख के इशारे से रोका और फिर वह जगतपति नाम के उस घुड़सवर से बोला, "अच्छा, अगर

पालकी में सचमुच मेरी बटी ही है तो वह उसमें से उतरकर अब तक हमारे पास क्यों नहीं आयी? राजमहल और हम उसके लिए कोई नये तो नहीं। उसकी तबीयत तो ठीक है न?"

"हां, प्रभु। वह स्वस्थ है। अभी मैं उसे पालकी से बाहर आने के लिए कहता हूं।" जगतपति से कहा।

फिर वह पालकी का परदा हटाकर बोला, "अब बाहर आ जाओ, युवरनी। तुम्हारे माता-पिता तुम्हारा इंतज़ार कर रहे हैं।" और इतना कहकर जगतपति राज-दंपति की ओर चल दिया।

परदा हटाकर मालिनी पालकी से बाहर आयी और भयभीत-सी हुई वह चारों ओर देखने लगी।

दूर से देखने में वह वाकई युवरानी-विद्यावती ही दिखती थी। पर वह इतना डर क्यों रही है, राज-दंपति सोचने लगे।

इतने में सेनाधिपति उग्रसेन जगतपति की ओर लपका और उसने उसकी कलाई को ज़ोर से पकड़कर तीखी आवाज में कहा, "यह युवती युवरानी नहीं है। तुम हमें चकमा देना चाह रहे हो।"

"नहीं, वह युवरानी ही है। इसमें संदेह की गुंजाइश ही कहां है।" जगतपति ने बड़ी लापरवाही से कहा।

"यह तुम कैसे कह रहे हो? क्या तुमने कभी युवरानी विद्यावती को देखा है?" सेनाधिपति ने पहले की तरह अपने तीखे स्वर में पूछा।

इस प्रश्न का उत्तर जगतपति ने सीधे-सीधे नहीं दिया, बल्कि बोला, "मैंने इसे दुष्ट ग्रहों से बचाया है। जब तक इस पर इन ग्रहों का प्रभाव था, मैं इसकी रक्षा करता रहा और अब मैं इसे यहां ले आया हूं।"

"युवरानी पर दुष्ट ग्रहों का प्रभाव था, यह तुम्हें कैसे पता चला?" अब आचार्य से वाचस्पति ने आगे बढ़कर प्रश्न किया, और प्रश्न करने के साथ-साथ उसने उसका दूसरा हाथ भी कसकर पकड़ लिया।

"यह जानकारी मुझे ज्योतिषियों से मिली थी।" जगतपति ने कहा।

"तुम इतने दिनों तक जो दिखाई नहीं

दिये, इसका कारण यही है न? अरे कृतघ्न। युवारनी की ग्रह स्थिति जानकर तुमने ही उसका अपहरण करके उसे छिपा रखा था। फिर उसे महाराजा तक पहुंचाने के लिए तुम शुभमुहूर्त की फिराक में रहे और ज्योतिषियों और पंडितों से चर्चाएं करते रहे। है न? दुष्ट जगतपति, अब तुम्हारा भंडाफोड हो चुका है। मैं तुम्हारे झांसे में आ गया था। इसके लिए मैं अपने को लज्जित अतुभव कर रहा हूं।" और यह कहकर आचार्य वाचस्पति ने जगतपति का हाथ झटके से छोड़ दिया।

इतने में जगतपति ने अपने गले में पहनी माला को अपने मुख्य हाथ से ज़ोर से खींचा। माला का खींचना था कि वहां एक चमक पैदा हुई और उसके साथ-साथ धुआं भी। उस धुएं के उठते ही जगतपति ने अपने दूसरे हाथ को भी झटका देकर छुड़ा लिया और वहां से भागने को हुआ।

तब तक महेंद्रनाथ, युवरानी और मुनि जितेंद्रनाथ भी वहां पहुंच चुके थे। जगतपति अभी उछलकर अपने घोड़े पर बैठने ही जा रहा था कि महेंद्रनाथ की नज़र उस पर पड़ गयी। उसे लगा कि यह कोई चोर-उचक्का है जो रत्नमाला चुराकर वहां से भागने जा रहा है। उसने उसे तुरंत रोका और धकेल कर घोड़े से नीचे गिरा दिया। उसने उस रत्नमाला को भी उससे छीन लिया और उससे बोला, "तुम्हारे खेल का अब अंत हो गया है, मित्र!"

तभी राज-दंपति और आचार्य वाचस्पति भी वहां आ गये। वहां कुछ सैनिक भी पहुंच चुके थे। राजा ने आदेश दिया, "इस दुष्ट को पकड़कर इसके हाथ-पांव बांध दो।"

सैनिकों ने आदेश का पालन किया और जगतपति को बंदी बन लिया।

तभी सेनाधिपति ने महेंद्रनाथ को पहचाना और बोला, "अरे, महेंद्रनाथ तुम? इस दुष्ट को पकड़कर तुमने तो कमाल कर दिया। शाबाश। अच्छा, युवरानी का क्या कोई समाचार मिला?"

"मैं यहीं हूं, मामाजी।" विद्यावती ने कहा।

और सेनाधिपति ने देखा कि यह वाक्य जिस आश्रम-वासिनी के मुंह से निकला था,

वह तो युवरानी विद्यावती ही थी। उसे देखकर वह खुशी से उछल पड़ा। वह एकएक कह उठा, "राजन्, विद्यावती आ गयी है।"

अब तक रानी वज्रेश्वरी ने अपनी बेटी को अपने वक्ष में भींच लिया था। वह बोली, "ओह.। मेरी बेटी। कहां थी तुम? कुशल तो हो न?" अब वह स्नेह से भरकर उसके सर को सहला रही थी और उसे बार-बार चूम रही थी।

"विद्यावती बेटी, यह वेश कैसा?" राजा भी उसका सर सहलाने लगा।

इतने में मालिनी भी वहां आ गयी और उसने झुककर युवरानी का अभिवादन किया। युवरानी उसे फौरन पहचान गयी और बोली, "अच्छा, तो तुम थी जो मेरी जगह पालकी में बैठी थी?"

महेंद्रनाथ ने राजा को नमस्कार किया और कहा, "प्रभु, मैंने अपना काम पूरा कर दिया है। युवरानी अब आपके सुपुर्द है। मुझे बहुत खुशी है कि मुझे अपने कार्य में सफलता मिली। वास्तव में, मुझे यह सफलता अपने चाचा जी के आशीर्वाद से मिली है।" और इसके साथ ही उसने वहीं पास ही खड़े मुनि की ओर इशारा किया। मुनि को देखकर राजा चौंक उठा।

अब महेंद्रनाथ ने कहा, "यह मेरे चाचा जितेंद्रनाथ हैं। यह महिमापुरी के राजपरिवार से हैं। कुछ ही समय पहले इन्होंने संन्यास लिया था।"
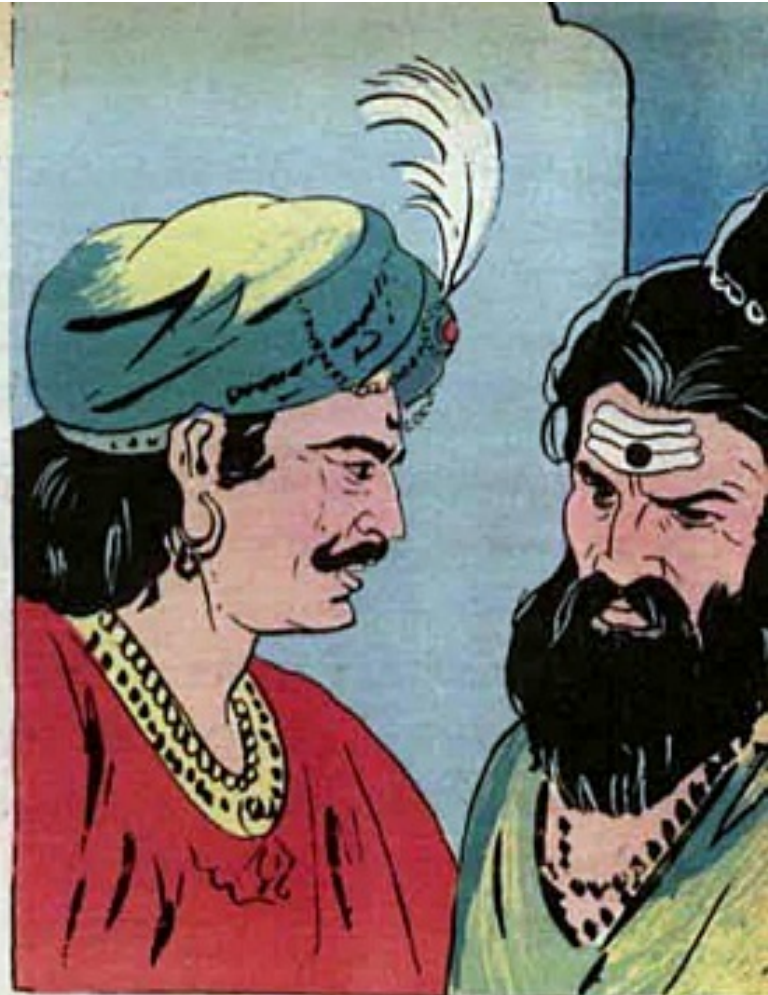
इस पर राजा वीरसिंह ने कहा, "देवी के मंदिर में जब वीरेंद्रनाथ दर्शन के लिए आये थे, तब मैंने उन्हें देखा था। बाद में मैंने सुना कि वह शत्रुओं के जाल में फंस गये और उनका वध कर दिया गया।"

इस पर मुनि वेश धारण किये जितेंद्रनाथ ने कहा, "मेरे बड़े भाई, सुरेंद्रनाथ, की युद्ध करते समय मृत्यु हो गयी। तब महेंद्र बहुत छोटा था। इसे और इसकी मां को लेकर मैं महिमापुरी से किसी तरह जान बचाकर भागा। कुछ समय के बाद मैंने संन्यास ले लिया। फिर दैवयोग से महेंद्रनाथ से जंगल में मेरी मुलाकात हो गयी। महिमापुरी का उत्तराधिकारी यही है। मैं यही बात आपको बताने आया हूं। मैं इसकी मां से क्षमा मांगने

आया हूं कि मैं इन्हें निराश्रम छोड़कर भाग खड़ा हुआ था ।"

"महेंद्र की मां हमारी देखरेख में सुरक्षित है । मैं अब उसे बुलवा लेता हूं ।" सेनाधिपति ने कहा ।

"आपकी आज्ञा हो तो मैं स्वयं अपनी मां को अपने साथ लिवाकर लाना चाहता हूं ।" महेंद्रनाथ ने कहा ।

राजा ने सेनाधिपति उग्रसेन को आदेश दिया, "अग्रसेन । महेंद्रनाथ के लिए आवश्यक सुरक्षा का प्रबंध करो । महेंद्रनाथ और उसकी मां हमारे अतिथि रहेंगे ।"

अब रानी ने कहा, "प्रभु, एक बात और ।" और फिर उसने राजा के कान में कुछ फुसफुसाया ।

राजा ने तुरंत अपना सर हिलाकर अपनी सहमति दी, और कहा, "मेरी बेटी के लिए इससे बढ़िया वर और क्या होगा । समय भी अनुकूल है । अब सब कुछ ठीक ही ठीक होगा ।" फिर उसने मुनि की ओर देखते हुए कहा, "महेंद्रनाथ और उसकी मां के यहां आने तक आप यहीं रहें ।" फिर उसने आचार्य वाचस्पति से कहा, "आप युवरानी की ग्रह-स्थिति एक बार और अच्छी तरह देखें और हमें सविस्तार बतायें । चलिए; हम सब भीतर चलकर बैठते हैं ।"

राजा के साथ अब सब राजमहल के भीतर हो लिये । एक तरफ रानी, युवरानी और परिचारिका मालिनी चल रही थीं, और दूसरी तरफ राजा, आचार्य वाचस्पति तथा मुनि जितेंद्रनाथ ।

सेनाधिपति उग्रसेन ने महेंद्रनाथ के प्रति आदर-भाव दिखाते हुए कहा, "आपके साथ आपकी माता जी को लिवाने मैं भी आ रहा हूं । आप जैसे साहसी युवक को जन्म देकर वह धन्य हुई । इतने कष्ट झेलने के बावजूद उन्होंने यह कभी किसी को नहीं बताया कि वह एक प्रसिद्ध राजघराने से हैं । उन्हें राजमहल में लिवाने का गौरव मैं प्राप्त करूंगा ।"

उग्रसेन और महेंद्रनाथ घोड़ों पर सवार हो गये और उन्होंने महेंद्रनाथ के निवास की ओर प्रस्थान किया ।

(समाप्त)

महाशिल्पी

अपनी धुन का पक्का राजा विक्रम हमेशा की तरह श्मशान में उस पेड़ के पास गया, पेड़ की शाखा से लटकती लाश को उतार कर उसने उसे अपने कंधे पर डाला और फिर मौन साधे श्मशान को पार करने लगा । तब लाश में मौजूद बैताल बोला, "राजन्, आधी रात के समय आप इतनी तकलीफ उठाकर इस तरह श्मशान में विचर रहे हैं । मैं नहीं समझ पा रहा कि इसका आपको फल मिलेगा कि नहीं, लेकिन आप में इसके प्रति विश्वास होना चाहिए । पर मैं यह भी नहीं जानता कि आप में वह विश्वास है कि नहीं । एक बात मैं ज़रूर जानता हूं कि कुछ कलाकारों, शूरवीरों तथा विद्वानों में आम तौर पर एक बात की कमी रहती है कि वे हर समस्या को व्यक्तिगत रूप से लेते हैं, तटस्थ दृष्टि से उसका हल ढूंढ़ने की कोशिश नहीं करते । उनमें व्यावहारिकता का अभाव रहता है । ऐसी मानसिकता के कारण वे आखिरी मंज़िल पर

वेतालकथा

पहुंचकर अपने श्रम के फल से हाथ धो बैठते हैं । मैं आपको अमरेंद्र नाम के एक महाशिल्पी के बारे में बताने जा रहा हूं । यह आपके लिए एक प्रकार की चेतावनी भी होगी । आप इसे ध्यान से सुनें । इससे आपका ध्यान भी बंटा रहेगा और आपको थकान भी महसूस नहीं होगी ।" और यह कहकर बैताल उसे अमरेंद्र की कहानी सुनाने लगा ।

चंद्रगिरि में राजा कीर्तिचंद्र का राज था । कीर्तिचंद्र कलाप्रिय था । उसके दरबार में नित्यप्रति कवि-सम्मेलन और नृत्य-कार्यक्रम होते रहते थे । महल के अंतःपुर में हर कहीं सुंदर तैलचित्र और कलाकृतियां रहती थीं ।

राजा हर प्रकार की कला को पसंद करता था, लेकिन शिल्पकला के प्रति उसके मन में विशेष अनुराग था । वह एक अद्भुत नृत्यशाला का निर्माण करवाना चाहता था । इसके बारे में उसके मन में कई तरह के विचार उठते । वह सोचता, यहां सुंदरियों की प्रतिमाएं होंगी, और यहां देवी-देवताओं की मूर्तियां होंगी ।

राजा इन्हीं विचारों में उलझा हुआ था कि एक दिन उसे अमरेंद्र नाम के एक शिल्पी का पता चला । अमरेंद्र राजधानी से दूर एक छोटे से गांव में रहता था । शिल्पकला में वह अद्वितीय था । लेकिन वह अपनी प्रतिभा का प्रचार नहीं करता था । न ही धन कमाने के प्रति उसके मन में कोई लालसा थी । वह जो भी प्रतिमा गढ़ता, अपने संतोष के लिए गढ़ता । उसका हाथ लगते ही कठोर से कठोर शिला में भी मृदुता आ जाती, और सुंदर कलाकृति में परिवर्तित हो जाती ।

राजा कीर्तिचंद्र ने निर्णय लिया कि अमरेंद्र को वह राज-शिल्पी का पद देगा और उससे अपनी नृत्यशाला को सजीव बनायेगा । उसने अपने कर्मचारियों के हाथों अमरेंद्र को अपना संदेश भेजा और साथ ही उन्हें यह भी कहा कि वे ससम्मान अमरेंद्र को राजधानी में ले आयें ।

राजकर्मचारी जब पालकी के साथ अमरेंद्र के यहां पहुंचे तो अमरेंद्र उनसे बोला, "मुझे सम्मान या पद की कोई लालसा नहीं । आप महाराजा से जाकर कह दें कि मुझे यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं है और मैं इसके लिए उनसे

क्षमाप्रार्थी हूं।" और इन शब्दों के साथ उसने उन्हें लौटा दिया।

राजकर्मचारी जब निराश लौट आये तो राजा कीर्तिचंद्र स्वयं अमरेंद्र से मिलने गया और उससे बोला, "बेशक तुम एक महान शिल्पी हो, लेकिन तुम अपनी कला केवल अपने तक ही सीमित रखे हुए हो। किसी भी कलाकार का यह अधिकर नहीं कि वह उस कला को अपने तक ही सीमित रखे। कला सब के लिए होनी चाहिए। तभी उसकी सार्थकता है।"

इस पर अमरेंद्र बोला, "महाराज, मैं नहीं कहता कि आप की बातों में तथ्य नहीं है। लेकिन आम तौर पर होता यह है कि राजा-महाराजा अपनी कीर्तिपताका फहराने के लिए कलाकारों को गोटियों की तरह इस्तेमाल करते हैं।"

अमरेंद्र से ऐसा उत्तर पाकर राजा कीर्तिचंद्र के मन को ठेस पहुंची। उसने कहा, "अमरेंद्र, तुमने मुझे ठीक से नहीं समझा। सच्चाई यह है कि तुम जैसे कलाकार मुझ जैसे राजा-महाराजा से कहीं महान् होते हैं। कृपा करके मेरी बात मान लो। मैं कई वर्षों से एक सुंदर नृत्यशाला के निर्माण के सपने देख रहा हूं। उसे तुम साकार करो।"

अमरेंद्र थोड़ी देर तक सोचता रहा। फिर बोला, "अच्छा, राजन्। मैं आपके सपने को साकार करूंगा। मैं उस नृत्यशाला के निर्माण का दायित्व अपने ऊपर लेता हूं।"

इसके बाद अमरेंद्र राजधानी चला

आया और नृत्यशाला के निर्माण में जुट गया, उसके लिए सुंदर कलाकृतियां तैयार करने लगा। उसका काम अनवरत चलता रहता।

एक दिन युवरानी विजयमाला नृत्यशाला का निर्माण-कार्य देखने आयी। उसने अमरेंद्र द्वारा तैयार की गयी कलाकृतियों को भी देखा। वे कलाकृतियां इतनी सजीव थीं कि युवरानी उन्हें देखकर चकित रह गयी। तभी उसकी नज़र हाथ में छेंनी लिये और शिलाओं को रूप-आकार देते अमरेंद्र पर पड़ी। अमरेंद्र रूपवान था। उसके चेहरे पर निराली आभा थी। ऐसे अद्भुत व्यक्ति को युवरानी पहली बार देख रही थी।

उसे देखते ही उसके मन में उसके प्रति प्रेम की भावना जगी और वह चाहने लगी

कि उससे उसका विवाह हो जाये ।

अब युवरानी बराबर निर्माणाधीन नृत्यशाला में पहुंचने लगी और अमरेंद्र से शिल्पकला और वास्तुकला के बारे में विस्तार से बातचीत करने लगी । लेकिन लज्जावश वह अपने मन की बात अमरेंद्र तक व्यक्त नहीं कर पा रही थी ।

कुछ समय के बाद नृत्यशाला का निर्माण कार्य समाप्त हो गया । उसे देखने राजा कीर्तिचंद्र और उसके मंत्रीगण आये और उसकी सुंदरता की अत्यधिक प्रशंसा करते रहे । इसके दो सप्ताह बाद नृत्यशाला का उद्घाटन किया जाना था । उसके लिए एक अच्छा मुहूर्त निकाला गया । उद्घाटन के समय नर्तकी हेमसुंदरी के नृत्य का भी आयोजन था ।

इस बीच एक दिन युवरानी विजयमाला अमरेंद्र को देखने आयी, और उसने अपने मन की बात अमरेंद्र के सामने रख दी ।

विजयमाला के मुंह से ऐसी बात सुनकर अमरेंद पल भर के लिए भौंचक रह गया । फिर थोड़ी देर तक सर झुकाये कुछ सोचता रहा । आखिर उसने अपना सर उठाया और विजयमाला की आंखों में तीक्ष्णता से देखते हुए बोला, "तुम युवरानी हो, और मैं एक सामात्य नागरिक हूं, किसी राजवंश से नहीं हूं । हम दोनों में समानता नहीं है!"

अमरेंद्र की बात पर विजयमाला हंस दी और कहने लगी, "इन वंश-मर्यादाओं इत्यादि के बारे में आप सोचना छोड़ दें । आप एक महान शिल्पी हैं । यह आपका वंश है । इंससे बड़ा वंश और कोई नहीं हो सकता ।"

"ठीक है," अमरेंद्र ने कहा, "लेकिन यह बताओ कि क्या हमारे विवाह के लिए महाराज की स्वीकृति है? आज से सात दिन तक तुम अपने पिता महाराजा कीर्तिचंद्र से इस विवाह के लिए स्वीकृति प्राप्त कर लो और फिर मुझे आकर बताओ ।"

लेकिन अगले सात दिन तक अमरेंद्र राजधानी में नहीं रुका । अभी चार दिन भी न हुए थे कि वह एकाएक वहां से चला गया और अपने गांव को लौट गया ।

कहानी खत्म हो चुकी थी । बैताल ने कहा, "राजन्, अमरेंद्र के इस व्यवहार से क्या ऐसा नहीं लगता कि उसमें लौकिक ज्ञान

का अभाव था, और वह कुछ-कुछ बुद्धिहीन भी था? अपने विवाह के लिए उसने युवरानी विजयमाला से कहा था कि वह राजा कीर्तिचंद्र से उसके लिए एक सप्ताह के भीतर अनुमति ले ले। लेकिन वह अवधि अभी पूरी भी न हुई थी कि वह उससे पहले ही वहां से चल दिया, और उसने यह भी जानने की कोशिश न की कि युवरानी के प्रयास का फल क्या रहा। इससे क्या ऐसा नहीं लगता कि उसमें जीवन के प्रति व्यावहारिक दृष्टि का अभाव था? इस संदेह का उत्तर जानते हुए भी यदि आप उसका स्पष्टीकरण नहीं करेंगे तो आपका सर फट जायेगा।''

इस पर राजा विक्रम ने उत्तर दिया, ''तुम्हारा सोचना गलत है। अमरेंद्र में न तो जीवन के प्रति व्यवहारिक दृष्टि का अभाव था, और न ही वह लौकिक ज्ञान से शून्य था। वह तो, बल्कि, बड़ी तीखी सूझबूझ वाला युवक था। यदि उसने उसे एक सप्ताह की मोहलत दी तो इसी से पता चल जाता है कि मानव-मन में उसकी कितनी पैठ थी! युवरानी अपने पिता से यह कहना चाहती थी कि वह अमरेंद्र से प्यार करती है। इसके लिए एक सप्ताह के समय की बिलकुल ज़रूरत न थी। वह तो अमरेंद्र से बात करने के बाद सीधे अपने पिता के पास जाती और उसे सारी बात बता देती। इसलिए अमरेंद्र का यह अनुमान था कि यदि राजा से विवाह की स्वीकृति मिलेगी तो वह एक या दो दिन में ही मिल जायेगी। लेकिन जब चार दिन तक भी युवरानी लौट कर नहीं आयी तो इससे स्पष्ट था कि वह अपने पिता से स्वीकृति प्राप्त करने में असफल रही है। इसीलिए अमरेंद्र ने तुरंत राजधानी छोड़ने का निर्णय लिया और अपने गांव को लौट गया।''

बैताल को उत्तर देने से राजा विक्रम का मौन भंग हो चुका था। इसलिए लाश समेत बैताल वहां से ग़ायब हो गया और पहले की तरह श्मशान में उसी पेड़ की शाखा से जा लटकने लगा। —(कल्पित)

[आधार : एन.आर. शिव नागेश की रचना]

सम्मान की भूख

शिव नाम के एक युवक ने शहर में ऊंची शिक्षा प्राप्त की और फिर वह अपने गांव विजयपुरी में लौट आया। उसके पिता का बहुत पहले ही देहांत हो चुका था। गांव में शिव एक सप्ताह ही रहा। फिर वह मां से बोला, "मुझे नौकरी की तलाश में कहीं बहर जाना होगा।"

इस पर शिव की मां बहुत खुश हुई और उससे बोली, "बेटा, तुम रघुनाथपुर में धनंजय से मिल लेना। वह तुम्हारी ज़रूर मदद करेगा। हो सकता है वह तुम्हें ज़मींदार के दीवान में नौकरी दिलवा दे। वह तुम्हारे पिता का बचपन का दोस्त है।"

अगले ही दिन शिव रघुनाथपुर जा पहुंचा और वहां उसने धनंजय से भेंट की। धनंजय को यह जानकर बड़ी खुशी हुई कि उसके बचपन के दोस्त के बेटे ने ऊंची शिक्षा प्राप्त की है। उसने कहा, "ज़मींदार के दीवान में नौकरी पाना इतना आसान नहीं। वहां भैरवानथ नाम का एक व्यक्ति है जो हर काम में रोड़ा अटकाता है। ज़मींदार हमेशा उसी की बात मानता है।"

"उस भैरवानाथ को खुश करने का अगर कोई उपाय है तो मुझे बताइए," शिव ने कुछ सोचते हुए कहा।

"भैरव सम्मान का भूखा है। वह चाहता है कि हर कोई उसी का गुणगान करता रहे।" धनंजय बोला।

"ठीक है। मैं उससे मिलकर देखता हूं। देखें, भाग्य किस ओर करवट लेता है। आप मुझे आशीर्वाद दीजिए।" और यह कहकर शिव वहां से चला गया।

ज़मींदार जहां रहता था, उसी इलाके में शिव का एक मित्र भी रहता था। उस का नाम नरसिंह था। शिव ने उसे अपने काम के बारे में बताने के साथ-साथ भैरव के

एस.जे. जगदीश

बारे में भी बताया और कहा, "सुना है, दीवान में नौकरी पाने के लिए पहले भैरव को अपना बनाना होता है । मेरी समझ में नहीं आ रहा कि यह काम कैसे साधा जाये!"

दोनों मित्र सोचते रहे । फिर उन्होंने एक योजना बनायी । योजना के अनुसार अगले दिन शिव सुबह-सुबह ज़मींदार के दीवान में गया और वहां उसने भैरव से मिलने की कोशिश की । उसे पता चला कि भैरव अभी किसी दूसरे व्यक्ति से बात कर रहा है और वह भोजन के समय ही मिल सकेगा ।

भोजन के समय शिव ने भैरव से भेंट की और बड़ी विनम्रता से उसे नमस्कार करके अपनी शिक्षा के बारे में बताने लगा, "महोदय, मैंने सुना है कि ज़मींदार साहब आपकी बात कभी नहीं टालते । कृपया आप मुझे दीवान में नौकरी दिलवा दें ।"

शिव की बात सुनकर भैरव ने बड़े गर्व से अपना सर हिलाया और बोला, "नौकरी के लिए मेरे पास हर रोज़ कितने ही लोग आते हैं । मैं किस-किस को नौकरी दिलवाऊं? खैर, ठीक है, कल आना । कोशिश कर देखेंगे ।"

शिव वहां से चला आया और जो बात भैरव से हुई थी, वह उसने नरसिंह को बता दी । तब नरसिंह ने कहा, "हमने तो पहले ही जान लिया था कि ऐसा ही होगा । है न! कल फिर उसके पास जाओ । इसके बाद हम मैदान में कूदेंगे ।"

अगले दिन भी शिव को भैरव के दर्शन

जल्दी नहीं हुए । चार-पांच घंटे तक उसने प्रतीक्षा करवायी और फिर उसने कहलवा भेजा कि अगले दिन आओ, फिर देखेंगे ।

अगले दिन शिव को भैरव के दर्शन हो गये । उस समय चार और लोग भी उस के पास बैठे थे और उसका गुणगान कर रहे थे ।

उसी बीच नरसिंह वहां घबराया-सा जा पहुंचा और चारों ओर देखते हुए वहां की स्थिति का जायज़ा लेने लगा ।

इस पर शिव बोला, "क्या बात है? यहां क्यों आये हो? किसे ढूंढ रहे हो?"

"कुछ नहीं, मैं राम दादा को ढूंढ रहा हूं । उन्होंने वायदा किया था कि वह मेरी दीवान में नौकरी लगवा देंगे ।" नरसिंह ने कहा ।

यह सुनते ही भैरव आग-बबूला हो गया

और बोला, "मुझसे आज्ञा मिले बिना उस नालायक नौकर ने तुम्हें यहां कैसे भेजा? राम दादा तो हमारा माली है। क्या वह तुम्हें नौकरी दिलवा सकता है? क्या तुम्हें इतना भी पता नहीं कि यहां दीवान में नौकरी दिलवाने का सामर्थ्य किसमें है?"

तब नरसिंह ने शांत स्वर में उसकी ओर देखते हुए प्रश्न किया, "आप कौन है, हुजूर?"

इस पर भैरव ने ज़ोर से अपना सर शिव की ओर घुमाकर कहा, "एक हफ्ते से तुम रोज़ मेरे पास नौकरी के लिए चक्कर काट रहे हो। इसे बताओ कि मैं कौन हूं।" भैरव के स्वर में गर्व था।

अब शिव ने नरसिंह से कहा, "यह भैरव हैं। दीवान में इनकी बात को ठुकराने वाला कोई नहीं है। इनके कहे बिना यहां पता भी नहीं हिलता। इन्हीं के परामर्श से ज़मींदार साहब किसी को नौकरी देते हैं।"

नरसिंह ने शिव की ओर उपेक्षा से देखा और बोला, "ओह, तो यह हैं भैरव महानुभाव। लेकिन मुझे विश्वास नहीं कि राम दादा की तुलना में इनकी यहां ज़्यादा चलती है। मैं कैसे विश्वास करूं?"

नरसिंह के मुंह से ऐसी बात सुनकर भैरव तिलमिला गया। उसे लगा कि उससे मिलने आये चार लोगों के सामने उसकी नाक कट गयी है। उसने नरसिंह की ओर बड़ी तीखी नज़रों से देखा और कहने लगा, "मैं भी देख लूंगा कि वह राम दादा तुम्हें इस दीवान में नौकरी कैसे दिलाता है। अब ज़रा कान खोलकर सुनो। कल शाम तक यह लड़का हमारे दीवान में नौकरी पा जायेगा और नौकरी भी कोई छोटी नहीं होगी। इसे यहां अधिकारी के पद पर रखा जायेगा। अब तुम देखना, यहां मेरी चलती है कि उस माली राम दादा की।"

भैरव ने जो कुछ कहा था वह अगले दिन सच हो गया। शिव को दीवान में एक अच्छी नौकरी मिल गयी। इस पर दोनों मित्र, शिव और नरसिंह, अपनी योजना की सफलता पर बहुत खुश हुए।

चन्दामामा परिशिष्ट-५३

भारत के पशु-पक्षी :

रंगदार लगलग

भारत में लगलग परिवार में सबसे अलग और आम दिखने वाला पक्षी है रंगदार लगलग । जैसे कि इसके नाम से पता चलता है, एक मीटर लंबा यह पक्षी अपने पर कई प्रकार के रंग लिये होता है । इसके चेहरे पर मोमी पीलापन होता है और वह परहीन होता है । इसकी चोंच लंबी और पीली होती है । इसके पंखों पर काले छींटों का नमूना बना होता है । इसकी पूंछ के पर गुलाबी होते हैं । ऊपरी भाग पर सफेदी रहती है और उस सफेदी पर चमकीली हरी आभा वाली काली धारियां होती हैं, और सीने के आर-पार काली पट्टी होती है ।

यह पक्षी गिद्ध के आकार का होता है । आम तौर पर यह टोलियों या बड़े-बड़े समूहों में झीलों और दलदल वाले इलाकों में पाया जाता है । दूसरे लगलगों की तरह यह आम तौर पर कूबड़ निकाले, बिना हिले-डुले खड़ा रहता है । कभी-कभी यह अपने भोजन की तलाश में बड़े शांत भाव से दलदल या उथले पानी में इधर-उधर टहलता रहता है । इसके भोजन में शामिल हैं मछली, मेंढक, केकड़े और पौधे । यह पानी में या पानी के निकट पेड़ों पर आराम से बैठा रहता है । जब ये उड़ने को होता है तो बड़े ज़ोर से कई बार अपने पंख फड़फड़ाता है, और फिर उड़कर थोड़ी देर तक धीमे-धीमे हवा में तैरता रहता है ।

इस पक्षी का घोंसला बड़े-बड़े तीलों से बना एक बिछौना-सा होता है जिसके मध्य में प्याले-नुमा गड्ढा होता है । वह गड्ढा तिनकों और पत्तियों से ढक दिया जाता है । एक पेड़ पर इस प्रकार के बीस तक घोंसले हो सकते हैं ।

रंगदार लगलग में स्वर-यंत्र नहीं होता । इसलिए आम तौर पर यह चुप ही रहता है । अगर कभी यह कोई आवाज़ निकालता भी है तो यह आवाज खड़-खड़ के रूप में होती है, जो जबड़ों के बजने से पैदा होती है ।

आज का भारत : साहित्य-दर्पण में

रात के समय जिस दीपक से तुम अपना रास्ता देख रहे थे, अगर वह एकाएक बुझ जाये और चारों तरफ अंधेरा घिर आये, तो जैसा तुम्हें लगेगा वैसा ही हमारी इस कहानी के नायक की मां का देहांत होने प र हमारे नायक को लगता है ।

नायक का नाम है भाऊ । वह अभी बाल्य अवस्था में ही है, और पुणे में रहता है । उसके पिता राव जी बंबई तथा इधर-उधर अपना भाग्य आज़माते भटकते रहते हैं । उनका ख्याल है कि उन पर किन्हीं ग्रहों की कुदृष्टि है

एक वीर बालक की गाथा

और जैसे ही वह कुदृष्टि हटेगी, वह लाखों के मालिक हो जायेंगे । लेकिन ऐसा होता नहीं ।

भाऊ की एक बहन है गंगी । वह उससे केवल डेढ़ वर्ष ही बड़ी है । उसकी शादी एक अधेड़ उम्र के व्यक्ति से कर दी जाती है । उस व्यक्ति की पहली दो पत्नियों का देहांत हो चुका है । शादी के बाद गंगी को ऐसे यातनाएं दी जाती हैं जैसे कि वह कोई गुलाम हो । आखिर, एक दिन वह परेशान होकर अपने इस निर्दयी पति के घर से भाग आती है ।

सौभाग्यवश भाऊ और गंगी की शिवराम नाम के एक शुभचिंतक से भेंट होती है । यह व्यक्ति प्रगतिवादी विचारों का है । उसकी पत्नी के विचार भी वैसे ही हैं । उनके एक ही संतान है, सुंदरी । इत्तफाक से सुंदरी भी संवेदनशील होने के साथ-साथ आदर्शवादी भी है ।

शिवराम, भाऊ और गंगी के शिक्षित होने में, सहायक होता है । लेकिन उस समय के समाज को यह पसंद नहीं था कि लड़कियां भी पाठशाला में पढ़ने जायें । दूसरे, यह समाज उस स्त्री को भी हेय समझता था जिसने अपने पति का घर छोड़ रखा हो, चाहे वह पति कितना ही अत्याचारी हो । परिणाम तो सामने आना ही था । भाऊ, गंगी और शिवराम के परिवार को ढेरों कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है । लेकिन उन्हें यह भी विश्वास है कि वे जो भी कर रहे हैं, ठीक कर रहे हैं । ये सब मिलकर एक बढ़िया इकाई बन गये हैं ।

भाऊ पढ़-लिखकर वकील बन गया है, लेकिन वह अपना ज़्यादा समय सामाजिक समस्याओं पर व्याख्यान देने और समाज-सुधार की एक पत्रिका का संपादन करने में बिताता है । इस काम को करते-करते उसके कुछ दोस्त भी बन गये हैं, हालांकि उसके दुश्मनों की संख्या भी बहुत ज़्यादा हो गयी है ।

अब वह उदास रहने लगता है, और कभी-कभी यह भी सोचता है कि क्या उसे इस पुण्य-कार्य को छोड़कर अपने

स्वार्थ के संसार तक ही सीमित रह जाना चाहिए था?

लेकिन उसके जीवन में एक क्षण वह भी आता है जब वह भावुकता से भरकर निर्णय लेता है कि वह पूरी लगन से अपने उच्च आदर्श को प्राप्त करने में जुट जायेगा । साथ ही वह यह शपथ भी लेता है कि वह कभी शादी नहीं करेगा ।

अगले ही दिन शिवराम उसके सामने अपनी बेटी के विवाह का प्रस्ताव रखता है । भाऊ के लिए यह बड़े संकट की घड़ी है । जितना सम्मान वह शिवराम को देता है, उतना उसने कभी और किसी को नहीं दिया । उसे बचपन से ही सुंदरी के प्रति लगाव था ।

दरअसल, इस प्रस्ताव के आने में थोड़ी देर हो गयी । उसने कुछ ही क्षण पहले शपथ ली थी कि वह शादी नहीं करेगा ।

शिवराम, सुंदरी और गंगी उन लोगों में नहीं हैं जो अपनी बात मनवाने के लिए किसी को मजबूर करें ।

हमारे नायक ने अपना नाम अब बदल लिया है । वह भावानंद बन चुका है । वह एक आश्रम की स्थापना करता
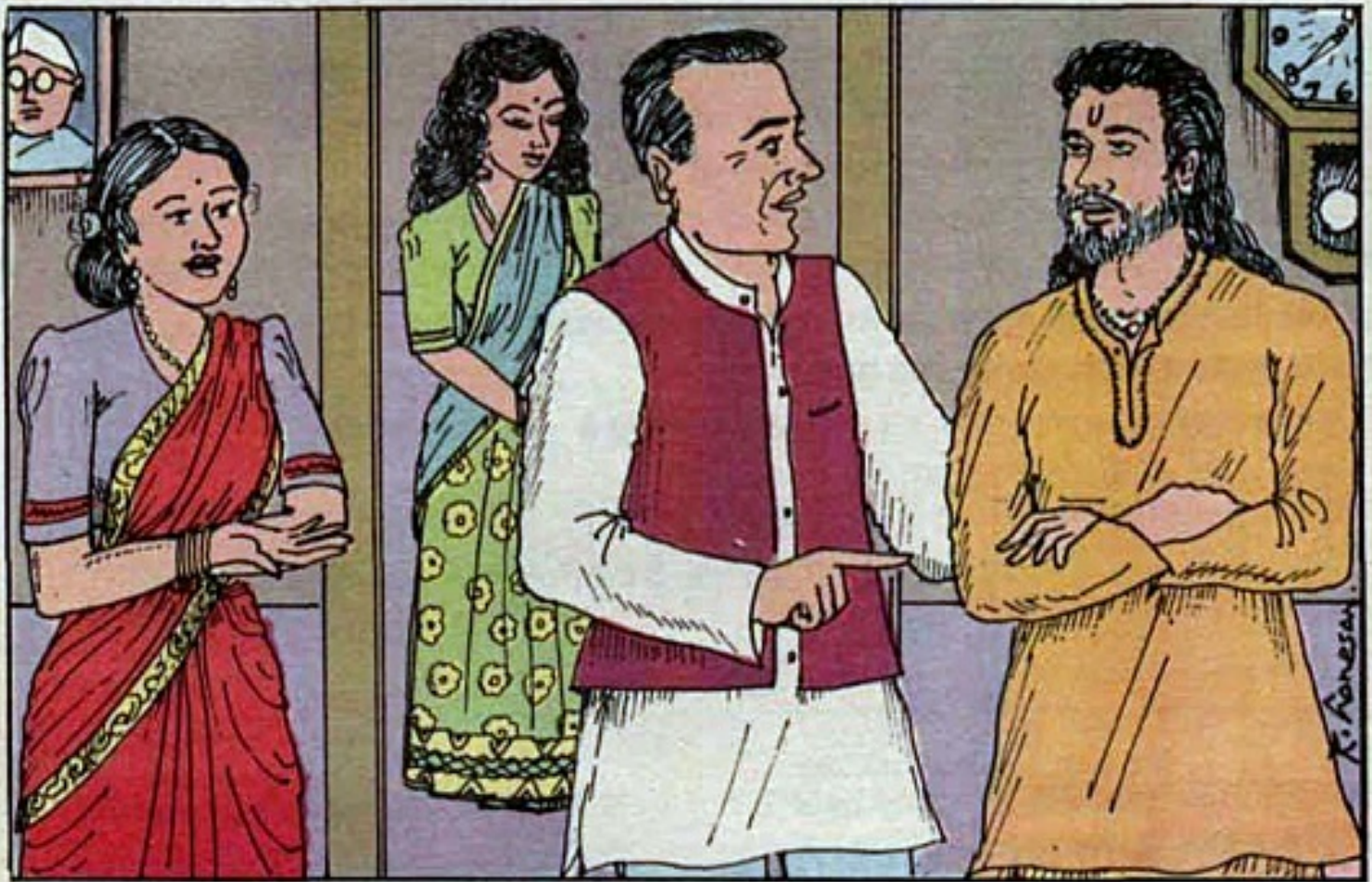
है, और अपने कुछ अनुयायियों के सहयोग से अपने समाज-सुधार के काम को जारी रखता है । लेकिन यह काम इतना बढ़ गया है कि वह इसके बोझ को सह नहीं पाता । धीरे-धीरे उसका स्वास्थ्य बिगड़ने लगता है और फिर उसकी मृत्यु हो जाती है ।

लेकिन उसके अनुयायी प्रण करते हैं कि जो काम उसने शुरू किया है, वे उसे जारी रखेंगे ।

'मी' (मैं) मराठी लेखक हरिनारायण आप्टे का एक युग-प्रवर्त्तक उपन्यास है । यह १९१६ में प्रकाशित हुआ था । यह प्रथम पुरुष में लिखा गया है । और एक नयी साहित्यिक शैली की शुरुआत करता है । बीते भारतीय समाज का इसमें बड़ा ही यथार्थ चित्रण हुआ है । आज के मराठी कथा-लेखन पर इसकी गहरी छाप पड़ी है ।

क्या तुम जानते हो?

१. पुरातन काल में मिस्र में "ममी" को लपेटने के लिए किस भारतीय वस्त्र का इस्तेमाल किया जाता था?
२. पश्चिम में औषधि का जनक किसे माना जाता है?
३. एलोरा के मंदिरों में वह कौन सा हिंदू मंदिर है जिसके निर्माण में १०० साल लगे? इसका नाम क्या है?
४. हज़रत मोहम्मद का जन्म कहां हुआ था?
५. पवनार आश्रम की स्थापना किसने की?
६. बंगाल के एक मुसलमान बादशाह ने महाभारत का बंगला में अनुवाद करने का आदेश दिया था। वह बादशाह कौन था?
७. हाल ही में एक ऐसी सिने-तारिका का देहांत हुआ है जिसने समूचे विश्व में यूनेस्को की ओर से बच्चों के लिए सद्भावना का दूत बनकर यात्रा की। अपनी पहली ही फिल्म में से अपनी भूमिका के लिए ऑस्कर पुरस्कार मिला था। वह अभिनेत्री कौन थी, और उसकी उस फिल्म का नाम क्या था?
८. उन दो देशों का नाम बताओ जहां कठपुतली का जन्म हुआ था?
९. निम्नलिखित स्मारकों में सबसे प्राचीन कौन-सा है-कुतुबमीनार, ताजमहल, खजुराहो तथा अजंता की गुफाएं?
१०. किस वर्ष में पहली बार परमाणु बम गिराये गये, और कहां?
११. सबसे पहले परमवीर चक्र किसे मिला?
१२. लेनिनग्राद अब अपने पुराने नाम से ही जाना जाने लगा है। वह नाम क्या था?
१३. आगरा का भी एक पुराना नाम है। वह क्या था?
१४. म्यानमार (भूतपूर्व बर्मा) की राजधानी कौन सी है?
१५. दक्षिणी भारत में वह कौन सा मज़ार है जहां हिंदू भी पहुंचते हैं?

उत्तर

१. मलमल खास। उस समय यह सबसे बढ़िया वस्त्र माना जाता था और इसका प्राचीन यूनानी ग्रंथों में बार-बार उल्लेख मिलता है।
२. हिप्पोक्रेटीज़।
३. कैलास मंदिर। इसका निर्माण राष्ट्रकूट शासक कृष्ण—१ (७५७-७८३) ने शुरू करवाया था। इसमें मिट्टी और पत्थर से बनी विशाल मूर्तियां हैं।
४. मक्का।
५. विनोबा भावे।
६. नुसरत शाह, जिसे आज भी कला के संरक्षक के नाते याद किया जाता है।
७. आड्रे हेपबर्न-द रोमन हॉलीडे।
८. भारत और मिस्र।
९. अजंता की गुफाएं।
१०. १९४५-हिरोशिमा और नागासाकी (जापान में)।
११. मेजर सोमनाथ शर्मा को १९४७ में। यह मरणोपरांत दिया गया था।
१२. सेंट पीटर्सबर्ग। यह नाम पीटर-१ महान के नाम पर पड़ा।
१३. अकबराबाद।
१४. यंगून (रंगून)।
१५. क्वादिनवली साहिब का नागोर मज़ार। क्वादिनवली साहिब तंजाउर के हिंदू शासकों के मित्र थे। इन शासकों में से एक ने इस पीर से बेटे के लिए प्रार्थना की थी। जब उसके बेटा हो गया तो उसने उस मज़ार को और बड़ा करवा दिया।

मिथ्याभिमान

कमलावती गांव में कैलास शास्त्री नाम का एक ज्योतिषी रहता था । भविष्य तो वह बताता ही था, ग्रहों के कुप्रभाव से बचने के लिए पूजा-अर्चना भी करवाता था ।

कहते हैं जहां वटवृक्ष नहीं होता, वहां एरंड का पौधा ही वटवृक्ष का स्थान पा जाता है । कैलासशास्त्री की विद्या के बारे में भी ऐसा ही कहा जा सकता है, क्योंकि वहां कोई दूसरा ज्योतिषी तो था नहीं जिससे उसकी तुलना होती ।

जब कोई व्यक्ति शास्त्री के पास अपना कोई कष्ट लेकर पहुंचता, तो वह बड़े गर्व से कहता, "मैं जो कहूंगा सच होकर रहेगा । तुम्हें मुझ पर पूरा विश्वास करना होगा । मेरी इस विद्या के साथ अगर तुमने किसी तरह की दिल्लगी की तो मैं तुम्हें शाप भी दे सकता हूं ।"

एक बार ऐसा हुआ उसके यहां दो ऐसे व्यक्ति आये जिन्होंने उसकी विद्या का मज़ाक उड़ाया । इससे कैलास शास्त्री गुस्से में आ गया और अपना शाप दे बैठा । और इत्तफाक से कई प्रकार के कष्टों ने उन्हें घेर लिया । इससे उन्हें विश्वास हो गया कि कैलाश शास्त्री में वाकई कोई शक्ति है ।

कैलासशास्त्री ने इस स्थिति से लाभ उठाना चाहा । उसने लोगों में यह प्रचार करना शुरू कर दिया कि उसके वश में एक पिशाचिनी है जिसके कारण उसे तुरंत पता चल जाता है कि कोई क्या सोच रहा है । उसका यह भी कहना था कि नित्य शिव पूजा करने से उसे वाक्शुद्धि मिल गयी है और वह जो कहता है, होकर रहता है । अब लोग वाकई उससे बहुत डरने लगे ।

उन्हीं दिनों उस गांव में एक नया व्यक्ति आया । उसका नाम रामनाथ था । रामनाथ ने एक घर खरीद लिया । गृह-प्रवेश से पहले

उदयकुमार

वह कैलास शास्त्री के पास गया और उससे विनत भाव से बोला कि वह उसे बताये कि उस घर में कोई दोष तो नहीं है ।

कैलास शास्त्री ने तुरंत पलटकर कहा, "जब घर खरीद ही लिया है, तब मुझसे क्या पूछने आये हो? मैं ज्योतिषी हूं, इसलिए सच-सच कहना ही पड़ेगा । ज्योतिष शास्त्र के अनुसार यदि तुम इस घर में रहोगे तो घर के मालिक होने के नाते तुम्हारी मृत्यु हो जायेगी । इसलिए मेरी बात मानो और इस घर को तिलांजलि दे दो ।"

कैलास शास्त्री की बात पर रामनाथ ने कोई ध्यान नहीं दिया, लेकिन रामनाथ की सास को इस पर बहुत गुस्सा आ गया । वह भी उसके साथ ही आयी थी । वह ज्योतिषी पर बुरी तरह से बरस पड़ी और बोली, "क्या कहा तुमने? घर के मालिक होने के नाते इसकी मृत्यु हो जायेगी? ऐसे शुभ अवसर पर तुम्हें अपने मुंह से ऐसे अशुभ शब्द निकालते हुए शर्म आनी चाहिए थी । अच्छा होता कि तुम चुप ही रहते । मैं तो कहूंगी कि ऐसे अशुभ शब्द कहने वाले के हाथ-पांव टूटें । उसकी कमर भी टूटे ।"

रामनाथ ने अपनी सास को शांत करने की कोशिश की, लेकिन वह बहुत व्यग्र हो उठी थी । कैलास शास्त्री ने अपनी चोटी को हिलाया और फिर अपने जनेऊ को भी ऊपर-नीचे किया और कहने लगा, "वाह! कैलास शास्त्री जैसे विद्वान को गालियां देनेवाले भी पैदा हो गये हैं! अच्छा सुनो, मैं भी कैलास शास्त्री हूं। मुझे एक पूजा और कुछ मंत्रों का जाप ही करना है और मैं तुम्हें अपनी

शक्ति के बल पर बुरी तरह झुलसा दूंगा ।"

जिस समय उसके मुंह ये शब्द निकले थे, उस समय वह गुस्से से थर्रा रहा था ।

पर रामनाथ की सास चुप न रह सकी । वह उसे कोसे जा रही थी, "अरे, तुम खुद ही झुलसोगे? देख लेना, छह महीने तक खाट न पकड़े रहे तो मुझे कहना । जा, बड़ा आया ज्योतिषी बनकर ।"

कैलास शास्त्री मारे अपमान और गुस्से के उठ खड़ा हुआ । उसे इस बात का भी ध्यान न रहा कि वह कहां जा रहा है । वह ज़ोर से बड़बड़ाता हुआ जैसे ही अपने घर से बाहर आया, वैसे ही वह सामने से आती एक बैलगाड़ी से टकरा गया और पास ही पड़े पत्थरों पर जा गिरा ।

पत्थरों पर गिरने से उसे भारी चोट आयी । उसके हाथ पांव तो टूटे ही, उसकी कमर भी टूट गयी । लोगों ने उसे उठाकर उसके घर के भीतर एक खटिया पर डाल दिया । उस दिन से वह छह महीने तक खटिया पकड़े रहा । कई तरह के इलाज हुए, लेकिन वह खटिया न छोड़ पाया । वह खूब कष्ट झेलता रहा । पर जब छह महीने बीत गये तो वह कुछ-कुछ ठीक होने लगा और फिर एक दिन वह चलने-फिरने भी लगा ।

अब गांव में चारों ओर यह खबर फैली कि रामनाथ की सास की गालियां कभी खाली नहीं जातीं । उनका यह भी कहना था कि जब कैलास शास्त्री जैसा ज्योतिषी भी उसके प्रभाव से न बच सका, तब एक साधारण व्यक्ति की क्या बिसात! अब वे लोग कैलास शास्त्री को कम मानते और रामनाथ की
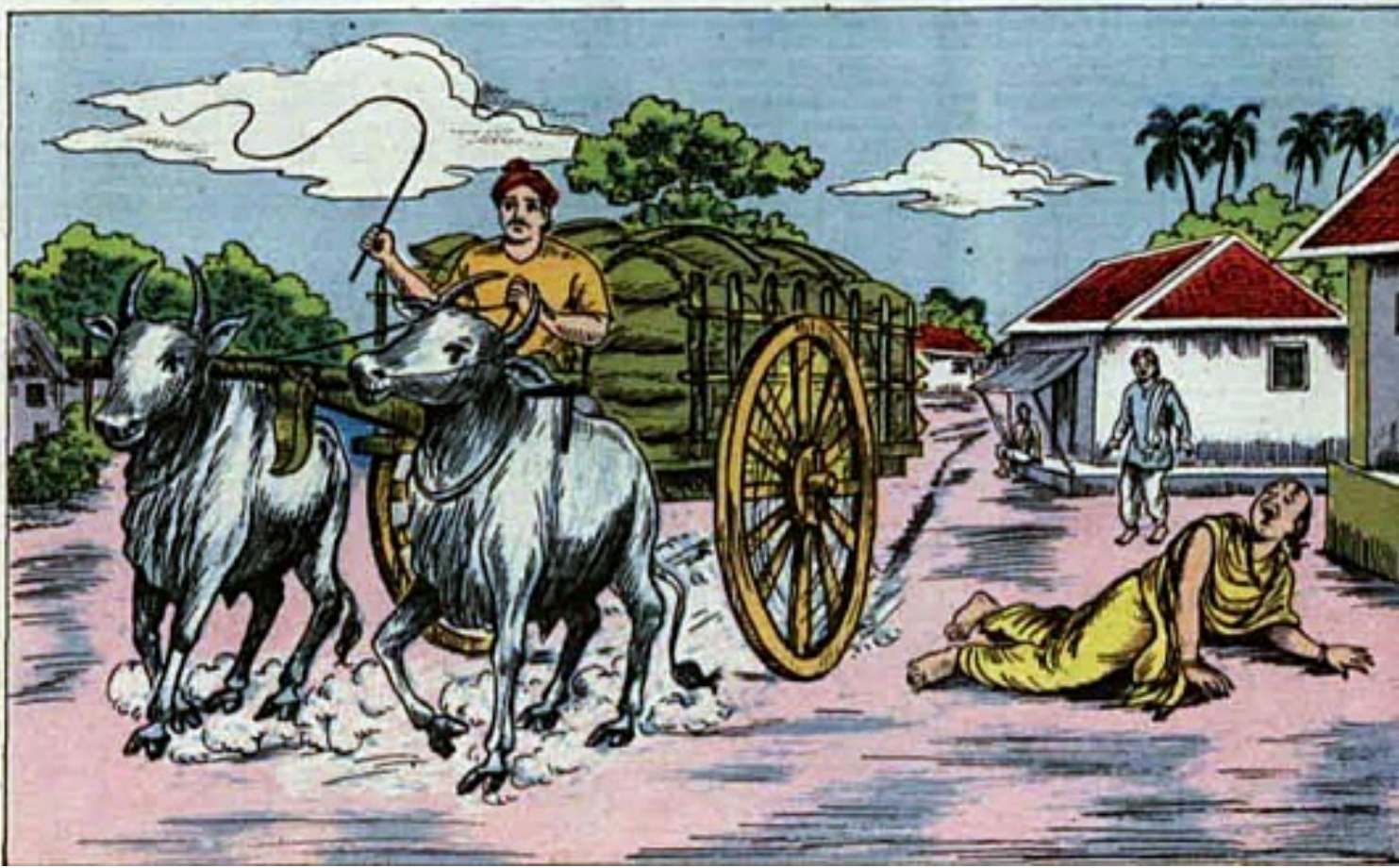
सास को ज़्यादा। वे उसका खूब आदर-सत्कार भी करने लगे थे।

कैलास शास्त्री जब पूरी तरह से स्वस्थ हो गया तो एक दिन उसने अपनी पत्नी से कहा, "गांव के ये भोले-भाले लोग, देखो, कैसे अंधविश्वास में पड़ गये हैं! वे समझते हैं कि रामनाथ की सास की जिह्वा में कोई खास शक्ति है। मैं नहीं समझ पा रहा कि उस दिन मैं बैलगाड़ी से कैसे टकरा गया। लेकिन मैं इस बदूमिज़ाज़ औरत की ज़बान एक बार बंद करके रहूंगा। मैं सहस्ररुद्र-अभिषेक करके इसे गूंगी बना दूंगा। तुम जल्दी से पूजा की तैयारी करो।"

जिस समय कैलास शास्त्री ये शब्द कह रहा था, उसमें प्रतिशोध की ज्वाला धधकती साफ नज़र आ रही थी। लेकिन उसकी पत्नी दूसरे स्वभाव की थी। उसने पति की बात सुनकर बड़े शांत ढंग से मुस्करा कर कहा, "मुझे यह तुक समझ में नहीं आ रही। झगड़ा या दोस्ती बराबर वालों से होन चाहिए। आंप पूजा किये बिना किसी को शाप नहीं दे सकते, लेकिन रामनाथ की सास बिना किसी प्रकार की पूजा किये लोगों को शाप दे सकती है। उसके मुंह से निकली गालियां गाज का रूप ले लेती हैं। मेरी बात छोड़िए, अब लोगों की नजरों में आपकी तुलना में वही महान है। इसलिए आप उससे शत्रुता न बढ़ाकर दोस्ती कर लें। यह पूजा आप किसी पुण्य-कार्य के लिए सुरक्षित रखें। यही मेरी सलाह है।"

पत्नी की बात कैलास शास्त्री को जंच गयी। लोक कल्याण करने के बजाय दूसरों के प्रति हिंस्रभाव रखना उसे एक तरह से अपमानजनक लगा। वह समझ गया कि यह सब कुछ उसके मिथ्यागर्व के कारण हुआ है। उसका वह गर्व अब एकदम जाता रहा था।

पर इसके साथ ही कैलास शात्री को उस गांव में टिके रहना और भी अपमानजनक लगा। इसलिए वह एक रात चुपके से अपने परिवार के साथ वहां से खिसक लिया और दूसरे गांव में चला गया।

अगले दिन हर किसी को यह सोचकर हैरानी हो रही थी कि कैलास शास्त्री ने वह गांव क्यों छोड़ दिया है और वह कहां चला गया है।
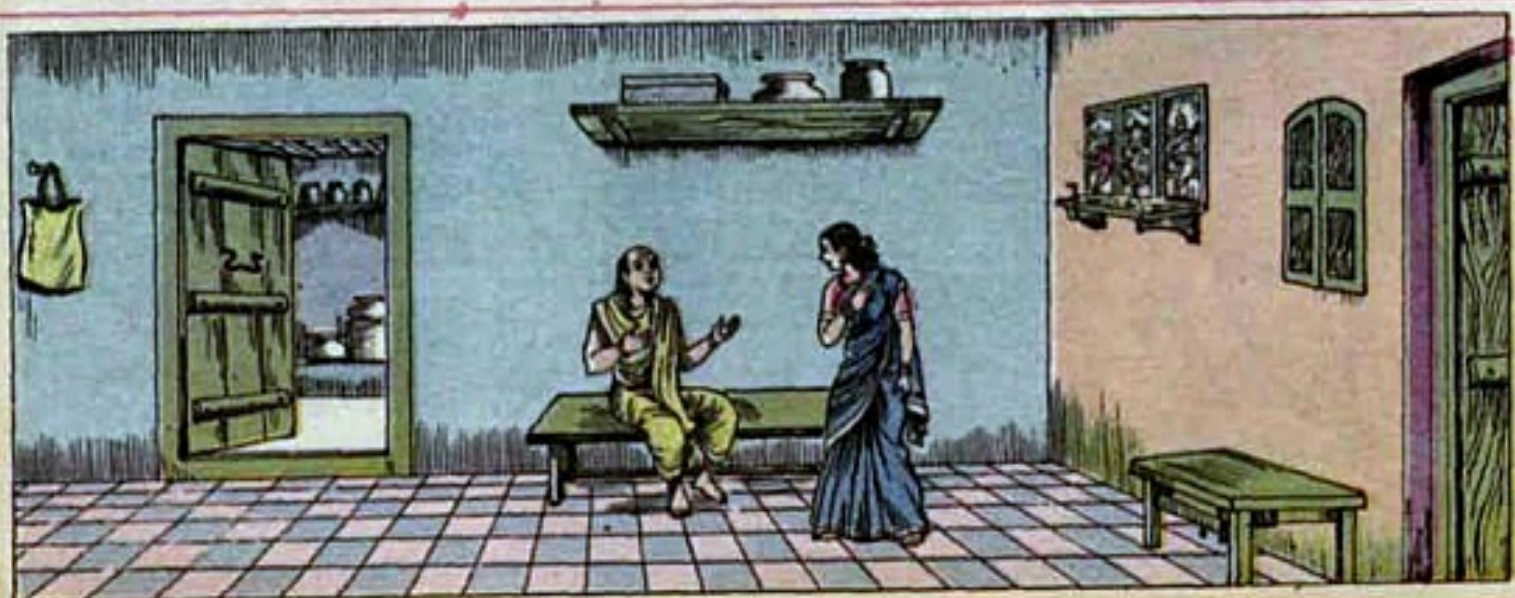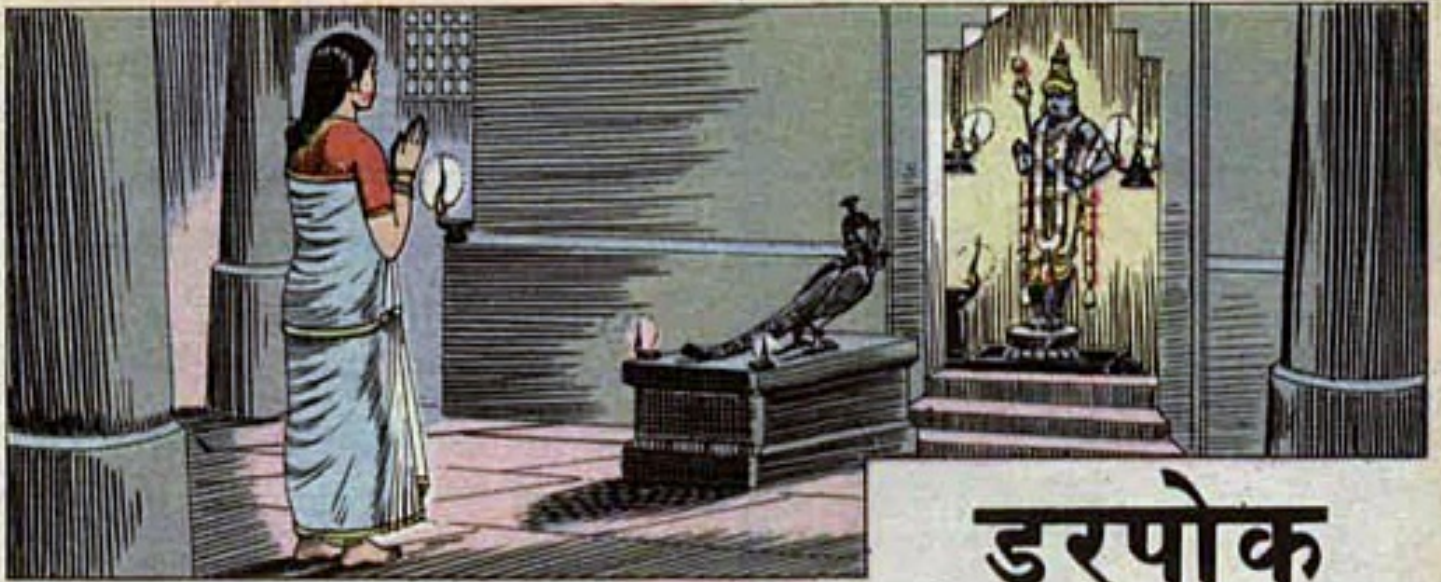
डरपोक

लगभग दो सौ वर्ष पुरानी बात है । केरल में तालंगोडू गांव में पार्वतम्मा नाम की एक महिला रहती थी । उसके पति का नाम रामकुट्टी था । रामकुट्टी राज दरबार में एक कर्मचारी था, जहां वह इतना व्यस्त रहता कि यह कह पाना कठिन होता कि वह कब घर लौटेगा ।

पार्वतम्मा अपना ज़्यादा समय भगवान सुब्रह्मण्य की पूजा में बिताती थी । वह सदा उसी की भक्ति में लीन रहती और उससे याचना करते हुए कहती, "स्वामी । तुम कब मुझे दर्शन दोगे? तुम कब मेरे हाथ से प्रसाद स्वीकार करने मेरे घर आओगे?"

एक दिन जब पार्वतम्मा हमेशा की तरह भगवान् के सामने याचना कर रही थी तो पुजारी भगवान् की मूर्ति के पीछे छिप गया और वहां से बला, "हे भक्तिन । मैं तुम्हारी भक्ति से बहुत प्रसन्न हूं । आज सूर्यास्त के समय मैं तुम्हारी यह याचना पूरी करूंगा ।"

मंदिर में भगवान की आवाज सुनकर पार्वतम्मा गद्‌गद हो उठी । वह तुरंत अपने घर क ओर चल दी और भगवान् को भोग लगाने के लिए तरह-तरह के पकवान तैयार किये । वह फिर प्रतीक्षा करने लगी ।

शाम हो रही थी । इतने में उसे एक भिक्षुक की आवाज़ सुनाई दी । वह पार्वतम्मा के घर के सामने खड़ा ज़ोर से "जय सुब्रह्मण्य" कह रहा था ।

उसे देखकर पार्वतम्मा को लगा कि शायद सुब्रह्मण्य स्वामी इसी रूप में आये हैं । वह उससे बोली, "पधारिए, पधारिए, स्वामी । यह मेरा अहोभाग्य कि आप मेरा आतिथ्य स्वीकार करने के लिए पधारे ।"

यह सुनकर भिक्षुक बोला, "मैं एक साधारण भिक्षुक हूं, मैं भिक्षा लेने आया हूं ।"

केरल की लोककथा

लेकिन पार्वतम्मा ने उसकी बात पर ध्यान नहीं दिया, बल्कि वह उसे घर के भीतर लिवा ले गयी । भिक्षुक को एक आसन पर बैठाया और उसके सामने पत्तल बिछाकर उस पत्तल पर थोड़ा-थोड़ा कर पकवान रखने लगी । भिक्षुक बड़े मज़े से उन पकवानों को खा रहा था ।

जब वह खा रहा था तो पार्वतम्मा ने भक्ति-भाव से ओतप्रोत होकर उसके गुणों का बखान करते हुए भजन गाने शुरू कर दिये । सूर्यास्त हो चुका था । इसलिए पार्वतम्मा ने ज्ल्दी से दीप भी जला दिये ।

तभी बाहर दरवाजे पर खट-खट हुई । पार्वतम्मा दरवाज़े की ओर दौड़ी और देखा कि पुजारी बड़ी सज-धज में खड़ा है और साक्षात् भगवान् सुब्रह्मण्य दिख रहा है ।

पार्वतम्मा को अब अपनी गलती का एहसास हुआ । खैर, उसने तुरंत भीतर आकर उस भिक्षुक को घर की टांड पर छिपा दिया । टांड में पूरी तरह अंधेरा था ।

अब पार्वतम्मा ने पुजारी को भीतर बुलाया और उसे भोजन करवाने लगी । वह उसकी सेवा में पूरी तरह से लीन थी ।

इतने में बाहर घोड़े की टापों की आवाज़ सुनाई दी । देखा तो पार्वतम्मा का पति ही घोड़े से उतर रहा था ।

अब उसे कुछ परेशानी-सी हुई । उसने जल्दी से पुजारी भगवान को नमस्कार किया और उससे बोली, "स्वामी, मेरे पति को भगवान् में बिलकुल विश्वास नहीं । वह गुस्सैल भी बहुत है । जब तक वह सहज नहीं होता, तब तक आप कृपया टांड पर छिपे रहें ।" और यह कहकर उसने पुजारी को भी टांड पर चढ़ा दिया ।

पुजारी को मजबूरी में उस टांड पर ही छिपना पड़ा । अंधेरा था, वह दुबककर एक कोने में लेट गया ।

भिक्षुक तो वहां पहले से था ही । उसका पेट भी भरा हुआ था । उसे नींद आ गयी ।नींद में उसे यह भी पता न चला कि वहां पुजारी भी लेटा है ।

पार्वतम्मा का पति जब भोजन करने लगा तो ढेर सारे पकवान देखकर उसे अचंभा हुआ । उसने पत्नी से पूछा, " यह सब क्या है? कहीं खीर बनी है, कहीं मिठाइयां हैं ।"

पति के प्रश्न का पार्वतम्मा ने इस प्रकार उत्तर दिया: "रात को मुझे सपना आया था कि आप आज आने वाले हैं । इसीलिए मैंने यह सब तैयारी की ।"

पत्नी के उत्तर से पति खुश हुआ । अब वह खाना खा चुका था।वह आराम करने लगा तो उसे भी नींद आ गयी ।

आधी रात हुई तो भिक्षुक को बुरी तरह से प्यास लगी । वह ज़ोर-ज़ोर से "पानी-पाती" कहने लगा ।

पार्वतम्मा के पति की नींद खुल गयी । उसने पूछा, "यह आवाज़ कैसी है?"

पार्वतम्मा ने तुरंत उत्तर दिया, "हम पितरों को शांत नहीं करते न । इसीलिए वे इस तरह से चिल्ला रहे हैं ।"

पत्नी की बात पर पति ने विश्वास करते हुए अपने हाथ जोड़कर ज़ोर से कहा, "हे मेरे बड़े-बुजुर्गो, आइंदा आप जो भी कर्म कहेंगे, मैं उन्हें विधिवत पूरा करवाऊंगा । इस बार आप हमें क्षमा करें ।"

पर भिक्षुक तो प्यास से बेहाल हो रहा था । वह ज़ोर से चीखा, "हाय, मरा! मैं प्यास से मरा जा रहा हूं ।"

पार्वतम्मा ने टांड की ओर मुंह करके कहा, "हे भगवान् । पूर्व की दिशा में एक नारियल पड़ा है । वहीं एक पत्थर भी है । आप नारियल फोड़कर अपनी प्यास बुझा लीजिए ।"

भिक्षुक ने पार्वतम्मा का संकेत समझ लिया । वहां पूर्व दिशा में वाकई एक नारियल पड़ा था । अंधेरे में उसे पुजारी का गंजा सर गोल पत्थर के समान लगा ।
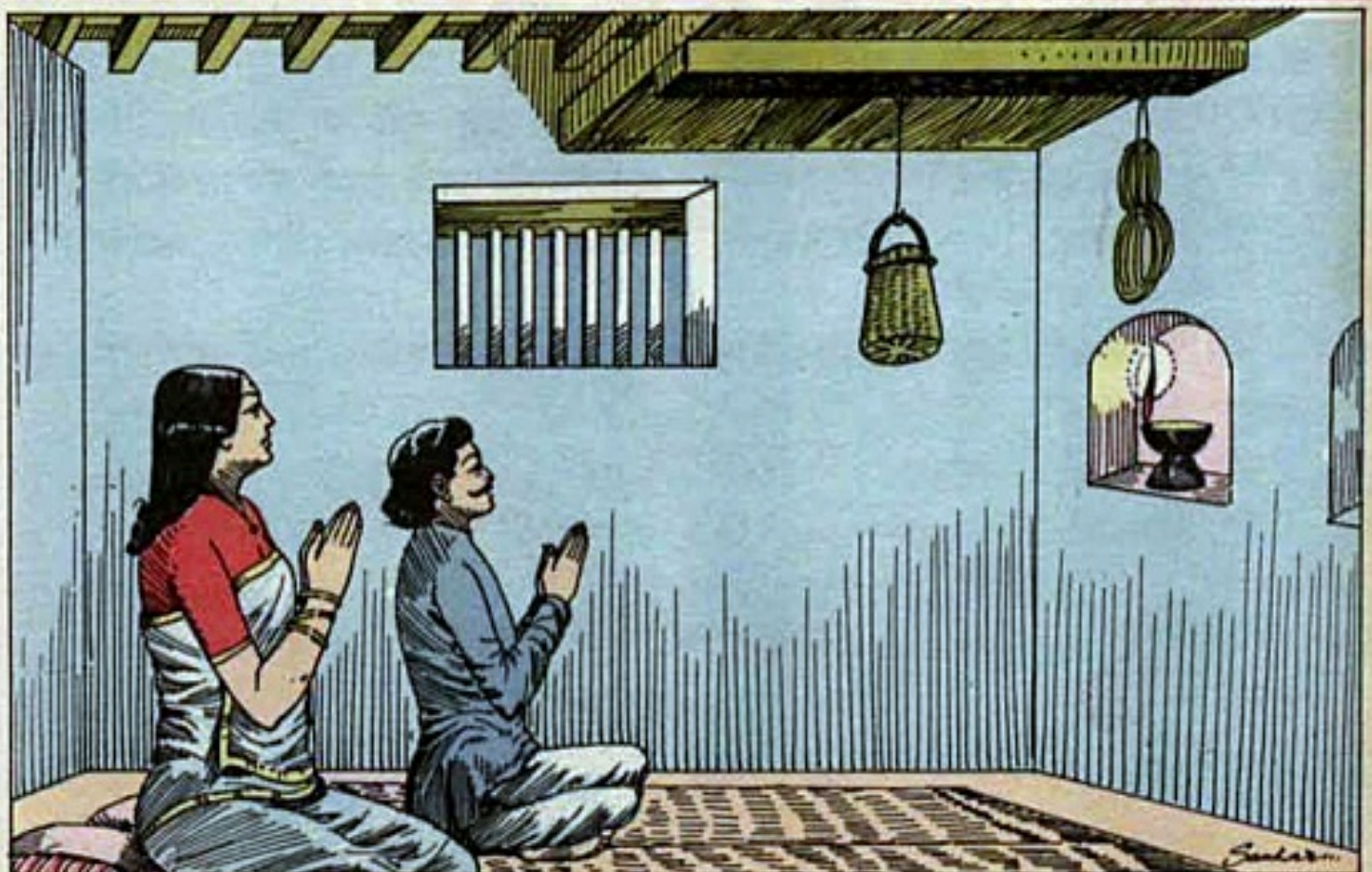
उसने उसी पर नारियल दे मारा। नारियल फूट तो गया, लेकिन साथ ही पुजारी का सर भी फट गया।

"बाप रे।" पुजारी भी अब ज़ोर-ज़ोर से चीखने लगा। फिर दर्द से छटपटाते हुए अंधेरे में ही उसका हाथ भिक्षुक के हाथ पर जा पड़ा। दोनों अब आपस में भिड़ गये थे, और गुत्थम-गुत्था होने लगे थे। टांड पर अब काफी हलचल मच गयी थी।

टांड पर हलचल की यह ध्वनि पार्वतम्मा के पति रामकुट्टी के कानों में भी पड़ी। वह डर गया। उसे लगा कि ज़रूर वहां प्रेतात्माएं हैं।

पार्वतम्मा ने इस स्थिति को भी संभालने की कोशिश की और अपनी आवाज़ में डर लाकर बोली, "उफ़, पितरों ने अब यह उग्र रूप धारण कर लिया है। मैं इनसे रोज प्रार्थना करती थी कि ये आपके लौटने तक शांत रहें। लगता है अब इन्हें पता चल गया है कि आप आ गये हैं।"

इतने में लड़ते-लड़ते भिक्षुक और पुजारी टांड से नीचे आ गिरे। बड़े ज़ोर की आवाज हुई। रामकुट्टी डर गया। उसे लगा कि उसके पितर उससे रुष्ट हैं। वह डर के कारण अपने होशो-हवाश खोने लगा। वह गिरता-पड़ता अपने घर से बाहर की ओर दौड़ा और एकदम घोड़े पर सवार होकर उस पर चाबुक बरसाने लगा। लेकिन ताज्जुब कि वे चाबुक स्वयं उसकी अपनी ही पीठ पर पड़ रहे थे।

अब रामकुट्टी और भी घबरा गया। उसे विश्वास हो गया कि उसके पितर उसका पीछा कर रहे हैं। वह बड़े ज़ोर-ज़ोर से याचना करने लगा, "मुझे छोड़ दीजिए। मेरे कर्तव्य-पालन में आइंदा कभी कोताही नहीं होगी। मैं आपको वचन देता हूं।"

इसी बीच पार्वतम्मा को मौका मिल गया था। उसने तुरंत भिक्षुक और पुजारी को घर से बाहर धकेल दिया। पर हां, उसकी समझ में यह नहीं आ रहा था कि जिस भगवान् की उसने इतनी आराधना की, उसी भगवान् ने इतना विचित्र अनुभव क्यों दिया।

सूर्योदय के समय वानर सेना और राक्षस सेना के बीच युद्ध शुरू हो गया । राक्षस बाणों, परिघों और खड्गों से वानरों पर वार कर रहे थे । वानर वृक्षों तथा बड़े-बड़े पत्थरों से राक्षसों पर वार करने लगे । दोनों सेनाओं के घायलों का खून युद्ध के मैदान में नदी के समान बहने लगा जिससे वहां उड़ने वाली धूल भी दब गयी ।

राक्षसों के आक्रमणों से वानर सेना लड़खड़ा गयी थी । इसलिए राम को स्वयं मैदान में उतरना पड़ा । उन्होंने राक्षसों पर आग बरसाने वाले बाण छोड़े । उन बाणों के सामने राक्षस टिक नहीं पा रहे थे । उन्हें तभी पता चलता जब बड़े-बड़े वृक्ष भी उन बाणों से पैदा होने वाली हवा से डोलने लगते । वह हवा वास्तव में प्रलय का आभास देती थी । अब तक अनेक राक्षसों का संहार हो चुका था ।

सुग्रीव, विभीषण, जांबवान और हनुमान वहीं थे । राम बोले, "मैं जिन बाणों का अब प्रयोग कर रहा हूं, उन्हें चलाने वाले केवल दो ही हैं—शिवजी और मैं ।"

उधर लंका नगर में राक्षसियों को भी युद्ध में होने वाले विनाश का पता चल गया था । उस विनाश की चपेट में आने वाले राक्षस पति, पुत्र और भाई, सभी थे । राक्षसियां उस विनाश के कारण ज़ोर-ज़ोर से विलाप कर रही थीं, और इस विनाश का कारण बनी शूर्पनखा को कोस रही थीं: "उस पापिन को राम जैसे उच्चादर्शी में

३४. राम के लिए इंद्र का रथ

क्या दिखा था जो उसने उसके प्रति अपने मन में लालसा पाली? शूर्पनखा जैसी धूर्त की बात मानकर रावण ने सीता का अपहरण ही क्यों किया? क्यों मोल ली उसने राम से शत्रुता? अगर वह सीता को पा जाता, तब भी कोई बात थी ।सीता को उठा लाने के लिए भेजा गया विराध क्या राम के हाथों बच सका? जीत तो राम की ही हुई न । अब भी तो वही जीत रहा है । पर रावण तो वास्तविकता समझता ही नहीं । ऐसी भयंकर क्षति के बावजूद । हाय! हम पर इतने दुख क्यों टूट पड़े ।" राक्षसियों ने रो-रोकर आसमान सर पर उठा लिया था ।

एक ओर राम दावानल की तरह राक्षस सेना को जलाकर भस्म किये दे रहे थे, दूसरी ओर रावण अपने साथ आये महोदर, महापार्श्व और विरूपाक्ष के सामने डींगें मारे जा रहा था, "खर, कुंभकर्ण, प्रहस्त और इंद्रजित का वध करने वाले शत्रु का अब अंत आ गया है । वह अंत मेरे ही हाथों होगा । मेरे बाण धरती और आकाश को घोर अंधकार में डुबो देंगे और वानर सेना का नाम मिटा देंगे ।"

रावण जिस रथ पर सवार था, उसमें आठ घोड़े जुते थे । रावण का तेज भी अपने पूरे चरम पर था । महापार्श्व, महोदर और विरूपाक्ष अपने-अपने रथ पर सवार थे । वानर सेना के चक्रव्यूहो को भेदकर रावण ने वहां बुरी तरह तबाही मचानी शुरू कर दी थी । राम ने जिस प्रकार राक्षस सेना का विध्वंस किया था, ठीक उसी प्रकार रावण वानर सेना का विध्वंस कर रहा था ।

सुग्रीव को अब मजबूर होकर वानर सेना की रक्षा का भार सुषेण को सौंपना पड़ा और वह स्वयं भी युद्ध में लीन हो गया । उसने भयंकर रूप से नाद किया, और कुछ साधारण राक्षसों का यों ही वध कर दिया । इसके बाद वह बड़े-बड़े राक्षस योद्धाओं का संहार करने लगा ।

सुग्रीव का उग्र रूप देखकर विरूपाक्ष अपने रथ से उछलकर पास के एक हाथी पर जा बैठा और वानर सेना को भेदने लगा । वहीं उसे सुग्रीव दिखा गया । उसे वह अपने बाणों से घायल करने लगा । सुग्रीव भी कम तैयारी में नहीं था । वह विरूपाक्ष के प्राण लेना

चाहता था । इसलिए उसने एक बड़ा पेड़ उखाड़ा और विरूपाक्ष के हाथी के सर पर दे मारा । यह वार बड़ा करारा पड़ा । इससे विरूपाक्ष का हाथी एकदम भूमि पर लुढ़क गया और उसने अपना दम तोड़ दिया ।

विरूपाक्ष के सामने अब हाथी से उतरने के अलावा कोई चारा न था । उसने अपने हाथों में तलवार और ढाल उठा ली और सुग्रीव पर पूरी शक्ति से वार करने लगा । सुग्रीव ने भी उतनी ही शक्ति से विरूपाक्ष पर वार किये । दोनों के बीच घमासान युद्ध चल रहा था, जो काफी देर तक चलता रहा । लेकिन सुग्रीव इससे विचलित नहीं हुआ, बल्कि उसका साहस और बढ़ गया । अब उसने विरूपाक्ष पर ऐसा वार किया जिससे उसकी नाक और मुंह से खून निकलने लगा और इसके साथ ही वह मृत्यु की ओर बढ़ने लगा ।

विरूपाक्ष की मृत्यु के बाद रावण ने वानर सेना से युद्ध करने के लिए महोदर को खड़ा किया । महोदर वानर सेना से लड़ते हुए जैसे ही आगे बढा, उसका सुग्रीव से सामना हो गया । सुग्रीव ने एक परिघ उठाकर महोदर के रथ के घोड़ों पर ज़ोर से फेंका जिससे घोड़े लड़खड़ा कर गिर गये । इससे महोदर का चहरा गुस्से से तमतमा गया और वह बुरी तरह से कांपता हुआ रथ से नीचे उतर आया । उसके हाथ में अब एक गदा थी, जससे उसने सुग्रीव पर वार करने शुरू कर दिये थे ।

लेकिन शीघ्र ही वह गदा टूट कर नीचे गिर गयी । सुग्रीव के हाथ का परिघ भी नीचे गिर गया । परिणाम स्वरूप दोनों योद्धाओं को मुष्टि युद्ध पर उतरना पड़ा । लेकिन वे जल्दी थक भी गये । इसलिए उनके हाथ जो भी हथियार लगा, उन्होंने वही उठा लिया और युद्ध करते रहे । इतने में महोदर के हाथ की तलवार सुग्रीव के हाथ की ढाल में फंस गयी । महोदर ने उसे बाहर खींचने के लिए पूरा ज़ोर लगाया, लेकिन वह असफल रहा । सुग्रीव के लिए यह एक अच्छा अवसर था । उसने तुरंत अपनी तलवार से उसका सर काट दिया, और इस तरह उसका काम तमाम कर दिया ।

अब तक महापार्श्व अंगद की सेना पर

छा चुका था और उसका नाश कर रहा था । इस पर अंगद बहुत गुस्से में आ गया और उसने पास ही पड़े लोहे के एक बहुत बड़े गोले को उठाकर उस पर दे मारा । गोले का लगना था कि महापाश्र्व और उसके रथ का सारथी, दोनों बेहोश हो गये । उसी समय गवाक्ष और जांबवान भी वहां आ गये । उन्होंने बड़ी-बड़ी शिलाएं उठायीं और महापाश्र्व के रथ को तोड़कर चूर-चूर कर दिया । साथ ही उन्होंने रथ के घोड़ों का भी वध कर दिया ।

इतने में महापाश्र्व होश में आया । उसने अब जांबवान और गवाक्ष पर बाणों की वर्षा शुरू कर दी । इस पर अंगद फिर गुस्से में आ गया और उसने दूर से ही उस पर एक परिघ फेंका । लेकिन वह उससे बच गया । अंगद अब उसके और निकट हो गया और उससे युद्ध करने लगा । फिर मुष्टि प्रहार से उसने उसका अंत कर दिया ।

अब रावण स्वयं युद्ध करने को लाचार था । वह साधारण वानरों से युद्ध करना नहीं चाहता था । वह राम का ही सामना करना चाहता था । इसीलिए वह राम की ओर बढ़ा । साथ ही उसने तामसास्त्र छोड़ा जिससे समूची वानर सेना हिल गयी । वह अस्त्र बड़ा प्रचंड था । उसने अपनी ज़द में कई वानरों को ले लिया । कई वानर तो डर के मारे भागने को हुए । लेकिन जब उन्होंने राम को अपने निकट देखा तो वे आश्वस्त हुए । फिर राम अकेले नहीं थे, उनके साथ लक्ष्मण भी था ।

रावण पर पहले लक्ष्मण ने ही वार किया । लेकिन लक्ष्मण के बाण रावण तक पहुंच ही नहीं पा रहे थे, क्योंकि रावण के बाण उन्हें बीच में ही खंडित कर देते थे । अब रावण के बाण राम की ओर आने लगे । राम ने भी उन बाणों को बीच में ही खंडित कर दिया । दोनों योद्धाओं के बीच भयंकर युद्ध चल रहा था । उनके अस्त्र एक दूसरे के अस्त्रों को बीच में ही नष्ट कर रहे थे ।

रावण ने अब राम पर असुरास्त्र का प्रयोग किया । यह अस्त्र बहुत ही खतरनाक था । राम ने उसे अपने आग्नेयास्त्र से ध्वस्त कर दिया । यह देखकर सुग्रीव तथा अन्य योद्धा बहुत खुश हुए ।
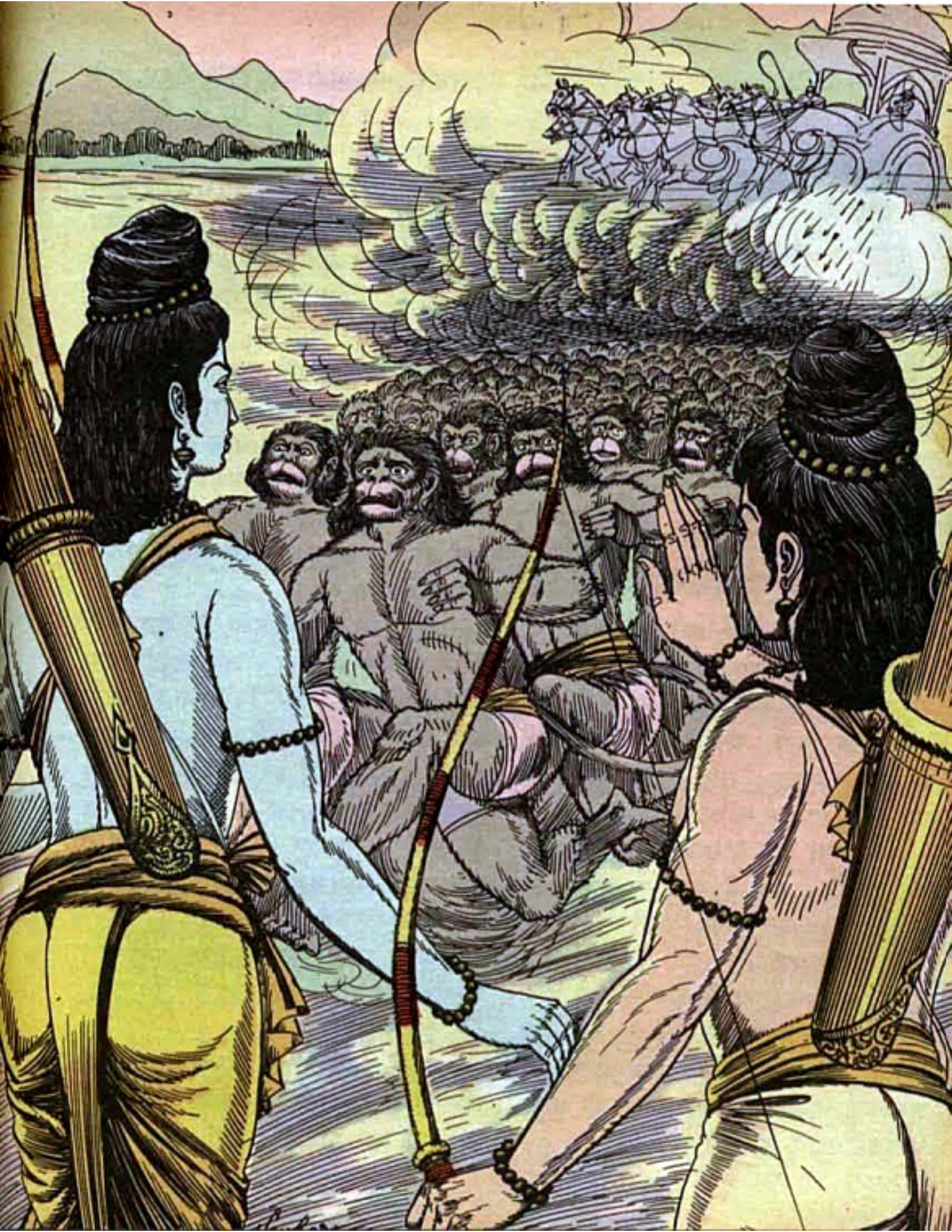
असुरास्त्र को व्यर्थ जाते देख रावण ने अब रौद्रास्त्र का प्रयोग किया । राम के पास इसका जवाब गंधर्वास्त्र था जिसने रौद्रास्त्र को नष्ट कर दिया । इस पर रावण ने सौरास्त्र का प्रयोग किया । राम ने उसे भी अपने एक अन्य अस्त्र से खंडित कर दिया ।

अब दोनों वीर साधारण बाणों से युद्ध कर रहे थे । राम के बाणों ने रावण को काफी घायल कर दिया जिससे रावण को थोड़ा रुकना पड़ा ।

अब लक्ष्मण ने अपने बाण बरसाने शुरू किये । उसने पहले रावण के रथ का ध्वज गिराया, फिर उसने उस रथ के सारथी का सर उड़ा दिया और फिर रावण के धंनुष के टुकड़े-टुकड़े कर दिये ।

जब लक्ष्मण थोड़ा रुका तो विभीषण आगे आया । उसने रावण के रथ के घोड़ों पर अपनी गदा से वार करने शुरू कर दिये और उन्हें नीचे गिरा दिया । इस पर रावण गुस्से में आ गया । उसने विभीषण पर एक शक्ति फेंकी । लेकिन लक्ष्मण ने उस शक्ति को बीच में ही अपने बाणों से तोड़कर उसे छिन्न-भिन्न कर दिया ।

अब रावण इससे भी भयानक शक्ति का प्रयोग करने को हुआ । लक्ष्मण ने इस खतरे को भांप लिया, और वह तुरंत विभीषण के सामने ढाल बनकर खड़ा हो गया, और फिर उसने रावण पर इतनी तीव्रता से बाणों की वर्षा की कि रावण का वह हठपूर्ण प्रयास विफल हो गया ।

रावण इससे दुखी भी हुआ और कृद्ध भी । उसने लक्ष्मण से कहा, "तुम अपनी मृत्यु स्वयं बुला रहे हो । तुमने विभीषण को अपनी ओट में लेकर अच्छा नहीं किया । अब तुम तैयार हो जाओ, मैं इस शक्ति का प्रयोग तुम्हीं पर करने जा रहा हूं । तुम अब कुछ ही क्षणों के मेहमान हो ।" और जैसे ही रावण ने ये शब्द कहे, वैसे ही उसने लक्ष्मण पर शक्ति छोड़ दी ।

राम ने उस स्थिति को तुरंत संभाला । उन्होंने उस शक्ति को शाप देते हुए कहा, "तू नष्ट हो जा!"

राम से शाप-ग्रसित होकर वह शक्ति लक्ष्मण से टकरायी तो ज़रूर, वह उसके शरीर के आर-पार भी हो गयी, लेकिन फिर

नीचे गिर गयी ।

राम को इस पर बहुत गुस्सा आया । उन्होंने उसे उठाया और उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिये ।

उधर रावण राम पर बराबर बाण छोड़े जा रहा था । राम ने उन बाणों की परवाह नहीं की और हनुमान को अपने आलिंगन में लेकर बोले, "तुम लोग लक्ष्मण की देखभाल करो । मुझे अब रावण का वध करना ही होगा ।"

लेकिन लक्ष्मण की हालत देखते हुए राम से युद्ध नहीं हो पा रहा था । उनका मनोबल जैसे कि घटता जा रहा था ।

सुषेण ने राम की मनोस्थिति देखते हुए कहा, "आप लक्ष्मण की चिंता मत करें । वह जीवित है । उसके प्राण अवश्य बचाये जा सकते हैं ।"

फिर वह हनुमान की ओर पलटा और उससे बोला, "पहले तुम जिस औषधि-पर्वत को यहां लाये थे, उसी के दक्षिणी शिखर पर से तुम्हें एक औषधि लानी होगी । वही लक्ष्मण को बचा सकती है ।"

सुषेण से संकेत पाकर हनुमान अविलंब उस औषधिपर्वत पर जा पहुंचा, पर उस औषधि को वह पहचान न सका । इसलिए वह उस शिखर को ही वहां उठा लाया । फिर उसने सुषेण से कहा, "आपने जो औषधि बतायी थी, मैं उसे पहचान नहीं सका । इसलिए पर्वत शिखर ह उठा लाया हूं । अब जो औषधि आप चाहते हैं, इस

पर से ले लीजिए ।"

सुषेण ने हनुमान के पराक्रम और उसकी बुद्धि की सराहना की । फिर उसने आवश्यक औषधि उठायी और उसे लक्ष्मण की नाक के निकट ले गया । औषधि ने तुरंत अपना असर किया और लक्ष्मण एकदम उठकर खड़ा हो गया ।

लक्ष्मण को स्वस्थ देखकर राम की आंखों से खुशी के आंसू बह निकले । उन्होंने भाव-विभोर होकर उसे गले से लगा लिया और बोले, "लक्ष्मण, तुम्हें जीवित देखकर मैं भी जीवित हो गया, वरना मेरे प्राण भी चले जाते । अगर तुम न रहते तो सीता का भी मेरे लिए कोई अर्थ न रहता । ऐसी हालत में यह युद्ध भी मेरे लिए

निष्प्रयोजन हो जाता । मुझे इसे अपना अहोभाग्य ही मानना चाहिए ।"

राम को भाव विह्वल हुआ देख लक्ष्मण ने कहा, "भैया, आपको इस तरह अपना मनोबल नहीं खोना चाहिए । आपको अपना वचन याद है न? आपने विभीषण से कहा था कि आप उसे लंकापति बनायेंगे । मेरी चिंता अब आप छोड़िए । पहले आप रावण का वध कीजिए और फिर अपने वचन का पालन कीजिए । आपका ध्येय रावण का वध करना होना चाहिए । मैं चाहता हूं कि सूर्यास्त होने से पहले रावण इस धरती पर न रहे ।"

लक्ष्मण के ये शब्द सुनते ही राम ने अपना धनुष उठाया और रावण पर बाण बरसाने शुरू कर दिये । लेकिन एक असमानता स्पष्ट दीख, रही थी । रावण के लिए तो दूसरा रथ आ गया था, और वह उसमें बैठकर युद्ध कर रहा था, लेकिन राम को धरती पर खड़े होकर ही युद्ध करना पड़ रहा था ।

इस असमानता को इंद्र ने समझा और उसने अपने सारथी मातली को अपना रथ देकर नीचे धरती पर भेजा । रथ पर सोने की पच्चीकारी की हुई थी । इसके अलावा उसमें कई प्रकार के वज्र और अस्त्र थे । वह उदीयमान सूर्य की तरह उद्भासित हो रहा था ।

मातली सीधा राम के पास गया और उनसे बोला, "हे राम! आपकी विजय की कामना करते हुए भगवान इंद्र ने यह रथ आपके लिए भेजा है । इसमें उनके कई प्रकार के अस्त्र भी हैं । इसी रथ पर बैठकर उन्होंने दानवों का संहार किया था । उस समय मैं ही उनका सारथी था । अब मैं ही आपका सारथी बनूंगा । आइए, पधारिए ।"

मातली के शब्द बड़े ही सुखद थे । राम ने उस रथ की प्रदक्षिणा की, फिर उसके सामने नमन किया और फिर वह उस पर सवार हो गये ।

अब राम और रावण के बीच इतना भयंकर युद्ध हो रहा था कि देखनेवाले दंग रह गये । यह एक अद्भुत ही था ।

अब्दुल्ला की चाल

पुराने ज़माने में बग़दाद पर सुलतान नूरशाह की हुकूमत थी। नूरशाह बड़ा रहमदिल इंसान था, लेकिन मज़ाक भी अच्छे करता था।

एक बार बग़दाद के एक बड़े सौदागर रहमतुल्ला की अचानक मृत्यु हो गयी। रहमतुल्ला की जायदाद का कोई वारिस न था। बग़दाद में ही अब्दुल्ला नाम का एक ग़रीब नौजवान रहता था। उसने रहमतुल्ला की जायदाद को हथियाने के लिए एक उपास सोचा और फिर वह सुलतान नूरशाह के दरबार में जा पहुंचा।

वह बड़े अदब से सुलतान को सलाम करके बोला, "जहांपनाह। गुस्ताखी माफ हो। हमारे शहर के एक बड़े सौदागर रहमतुल्ला की जायदाद शाही खज़ाने में जमा हुई है क्योंकि उसका कोई वारिस नहीं था। वह अकेला रहता था। दरअसल, मैं भी अकेला रहता हूं। कहते हैं न जिसका कोई नहीं होता, अल्लाह ही उसका माई-बाप होता है। इस तरह रहमतुल्ला और मैं दोनों भाई हुए, अब आप मुझे मेरे बड़े भाई रहमतुल्ला की जायदाद का वारिस घोषित कर दें और उसकी जो जायदाद आपके खज़ाने में पहुंच चुकी है, वह मुझे दिलवा दें।"

"हां, तुम ठीक कहते हो।" कहकर सुलतान ने खज़ांची को बुलवाया और उसे हुक्म दिया कि रहमतुल्ला की जायदाद में से एक दीनार उसके छोटे भाई अब्दुल्ला को दे दिया जाये। अब्दुल्ला ने हैरानी से कहा, "बस, एक ही दीनार?"

"हां, क्योंकि रहमतुल्ला के तुम्हारे जैसे इस हुकूमत में कई हजार भाई हैं, और उन सब को अपना-अपना हिस्सा मिलना चाहिए। है या नहीं?" सुलतान ने मुस्कराते हुए कहा।

अब्दुल्ला एक दीनार लेकर बड़ी निराशा से अपने घर लौट गया। कुछ ही देर बाद सुलतान के आदमी अब्दुल्ला का घर ढूंढते-ढूंढते आ पहुंचे और उन्होंने उसे सुलतान की तरफ से बतौर नज़राना एक हज़ार दीनारों की थैली पेश की और वहां से चले गये। बेशक, अब्दुल्ला की चाल कामयाब नहीं हुई थी, लेकिन उसे सुलतान का रहम पाने में कामयाबी ज़रूर मिल गयी।

—लोकेश्वरी

चंपा और चुन्नी

मधुपुरी के जंगल में एक लकड़हारा रहता था । उसकी दो बेटियां थीं । एक का नाम चंपा था और दूसरी का चुन्नी ।

चंपा अभी एक वर्ष की ही थी कि उसकी मां का देहांत हो गया । पत्नी के देहांत के बाद लकड़हारे ने दुर्गा नामक औरत से विवाह कर लिया जिससे चुन्नी का जन्म हुआ ।

दुर्गा बडी कठोर थी । वह चंपा को कई प्रकार के कष्ट देती । सारे घर का काम अकेली चंपा से ही करवाती । साथ-साथ उसे ढेर-सारी गालियां भी देती ।

एक पूर्णमाशी की रात चंपा की नींद खुल गयी । वह झोंपडी से बाहर आने को ही थी कि उसे अपने पिता और सौतेली मां की बातें सुनाई दीं ।

"लड़कियां बड़ी हो गयी हैं । इस साल किसी न किसी तरह चंपा की शादी तो कर ही देनी चाहिए ।" चंपा के पिता ने कहा ।

पति की बात सुनकर दुर्गा गुस्से से जल-भुन गयी और बोली, "क्या तुम पागल हो गये हो? चंपा की शादी कर दोगे तो घर का काम-काज कौन संभालेगा? चुन्नी के विवाह की बात ही सोचो । चंपा के विवाह की बात करनी फिजूल है ।"

सैतेली मां के जब ये शब्द चंपा के कानों में पड़े तो वह एकदम दुखी हो उठी । वह इस बात से डर गयी कि शायद उसे आजीवन घर के कामकाज में ही जुटा रहना पड़ेगा । उसे लगा कि ऐसी व्यर्थ की ज़िंदगी जीने से तो किसी हिंस्र पशु का शिकार बन जाना कहीं बेहतर होगा । वह बाहर चली आयी और फिर जंगल की ओर बढ़ने लगी ।

लेकिन चंपा को वहां कोई हिंस्र पशु नहीं मिला । केवल एक जगह उसे एक पुराना कुआं दिखाई दिया । वह कुएं में कूदने को ही थी कि एक पेड़ पर से एक प्रेत उसके

कामेश्वरी शर्मा

सामने कूदा और उसे रोकने लगा ।

प्रेत को देखकर चंपा डरी नहीं, पूछा, "मुझे मरने से रोकने वाले तुम कौन हो?"

लेकिन प्रेत ने बड़े स्नेह से कुरेद-कुरेद कर उसने चंपा की सारी कहानी जान ली । चंपा कह रही थी, "अपनी सौतेली मां की गालियां सुनते-सुनते मैं तंग आ चुकी हूं । मुझे मर जाना ही बेहतर लग रहा है ।"

"छी, छी! इतनी छोटी सी बात पर जीवन से इस तरह की विरक्ति! न,न । ऐसा मत करना । रुको, मैं अभी आया ।" और यह कहकर वह प्रेत उस कुएं में कूदा और फिर एक पुरानी थैली के साथ बाहर आ गया । वह थैली चंपा की ओर बढ़ा दी ।

"यह थैली मेरे किस काम की है?" चंपा ने आश्चर्य से पूछा ।

"अगर यह थैली तुम्हारे पास रहेगी तो तुम्हें अपनी सौतेली मां की गालियों से संतोष मिलेगा । जैसे-जैसे वह तुम्हें गालियां देगी, वैसे-वैसे एक-एक गाली के एवज़ में थैली में सोने का एक-एक सिक्का आयेगा । इस तरह तुम्हारे पास काफी सिक्के इकट्ठे हो जायेंगे जिससे तुम्हारी शादी बड़े ठाठ-बाट से हो सकती है । हां, एक बात याद रखना—थैली की यह शक्ति केवल एक दिन के लिए ही बनी रहेगी," प्रेत ने चंपा को समझाते हुए कहा ।

चंपा को प्रेत की बात अच्छी लगी । उसने उसके प्रति कृतज्ञता जतायी और अपनी झोंपड़ी में लौट आयी ।

अगले दिन तड़के ही दुर्गा ने चंपा को उल्टी-सीधी सुनानी शुरू कर दी । "क्यों री, कमबख्त! अब तक सोयी रहेगी? उठ, जल्दी से ढोरों की जगह साफ कर ।"

चंपा खुश हुई । सौतेली मां की पहली गाली उसे मिल गयी थी । उसने थैली को टटोला । उसमें एक सोने का सिक्का आ गया ।

उस शाम जब तक लकड़हारा झोंपड़ी में लौटा, तब तक दुर्गा की गालियों के फलस्वरूप उस थैली में दो सौ से भी ज़्यादा सोने के सिक्के इकट्ठे हो गये थे ।

चंपा ने वे सिक्के अपने पिता को दिखाये और उससे बोली, "मुझे ये सिक्के पूनम की रात के प्रेत से मिले हैं ।"

चंपा की बात दुर्गा भी सुन रही थी। वह बोल पड़ी, "यह सोना तुम्हें मेरी गालियों के कारण मिला है, यह मेरा है। मैं इससे चुन्नी की शादी करूंगी।"

लकड़हारा इस बार तन गया। उसने दुर्गा की बात काटते हुए कहा, "ऐसा अन्याय मैं नहीं होने दूंगा। इस पैसे से मैं चंपा की ही शादी करूंगा।"

पति के स्वर में पहली बार आवेश का पुट पाकर दुर्गा चुप हो गयी। लकड़हारा चंपा के लिए रिश्ता ढूंढने में जुट गया।

फिर से पूनम की रात आयी। उस रात दुर्गा ने अपनी बेटी चुन्नी को खूब समझा-बुझाकर जैसा चंपा ने किया था, वैसा ही करने को कहकर उसे जंगल में भेजा। चुन्नी कुएं की ओर बढ़ रही थी।

तभी पूनम की रात के प्रेत ने उसे रोका। चुन्नी ने कहा कि वह अपनी मां की गालियां बर्दाश्त नहीं कर पा रही, और इसलिए वह यहां आत्महत्या करने आयी है।

प्रेत कुएं के भीतर से थैली लेकर बाहर आ गया। फिर वह उस थैली को चुन्नी को देते हुए उसका महत्व बताने लगा। चेतावनी भी दी कि इस थैली की यह शक्ति केवल एक दिन के लिए ही बनी रहेगी। चुन्नी खुशी-खुशी थैली लेकर लौटी

ठीक उसी समय उस देश का राजा अपने इकलौते बेटे को डांट रहा था, "बताओ, तुम आखिर शादी करना चाहते हो कि नहीं?"

युवराज ने धीमे से हंसते हुए उत्तर दिया, "मैंने कब कहा कि मैं शादी करना नहीं चाहता? हमारे राज्य के जंगल में एक लकड़हारे की दो बेटियां हैं जो बहुत ही सुंदर और सुशील हैं।"

राजा फौरन समझ गया कि युवराज अक्सर उस जंगल में शिकार खेलने के लिए क्यों जाता था। उसने उन्हें तभी देखा होगा, और वे उसके दिल में बैठ गयी होंगी।

लेकिन वह तो जल्दी से जल्दी अपने बेटे

लेकिन वह तो जल्दी से जल्दी अपने बेटे
का विवाह कर देना चाह था। इसलिए लकड़हारे की बेटियां पसंद हैं तो मुझे कोई ऐतराज़ नहीं। बोलो, तुम उनमें से किस के साथ शादी करना चाहोगे?"

पिता की बात सुनकर युवराज विजय

आश्वस्त हुआ। बोला, "वे दोनों सुंदर हैं, लेकिन मैं उन दोनों को पास से देखना चाहता हूं, और फिर उनसे बात करके निर्णय लूंगा कि कौन मेरी पत्नी बनने के योग्य है।"

दूसरे दिन राजा और युवराज, दोनों छद्मवेश में, उस लकड़हारे के यहां पहुंचे। उस समय सूर्योदय हो रहा था, और लकड़हारा तब तक लकड़ियां काटने जंगल के भीतर जा चुका था। चंपा झोंपड़ी के सामने वाले हिस्से को बुहार कर और उस पर पानी छिड़ककर रंगोली सजा रही थी। दो अजनबियों को वहां एकाएक आये देखकर उसने उनका स्वागत किया और फिर वहां खाट बिछाकर उन्हें उस पर बैठने के लिए कहा। फिर बोली, "शायद आप मेरे पिता जी से मिलने आये हैं। पर वह तो काम पर जा चुके हैं। अब शाम को ही लौटेंगे। क्या आप मेरी मां से बात करना चाहेंगे? वह तो भीतर है।"

इस बीच झोंपड़ी के भीतर से दुर्गा की आवाज़ सुनाई दी। वह चुन्नी को गाली पर गाली दिये जा रही थी, क्योंकि वह चाहती थी कि चुन्नी की थैली सोने के सिक्को से लबालब भर जाये। वह बिना रुके गाली दिये जा रही थी, जैसे कि गाली देना उसका धर्म बन गया था।

चंपा झोंपड़ी के भीतर गयी और अपनी सौतेली मां से बोली कि बाहर दो अजनबी आये हैं जो उससे बात करना चाहते हैं। लेकिन दुर्गा को लगा कि अगर उसने गाली देना बंद कर दिया तो हो सकता है कि अनर्थ

हो जाये। इसलिए उसने चंपा को दुतकारते हुए कहा कि वह उनसे कह दे कि वह आज बहुत व्यस्त है, वह आज किसी से नहीं मिल सकती, चाहे इस देश का राजा ही क्यों न आ जाये और उसके पास बात करने की बिलकुल फ़ुरसत नहीं है।

चंपा झोंपड़ी से बाहर आयी और अजनबियों से बोली, "मेरी मां आज कुछ ज़्यादा ही व्यस्त है। वह आप से बात नहीं कर सकती। आप इसे कृपया गलत न समझें।"

"ठीक है, वह नहीं मिलना चाहती तो न सही। हम फिर कभी मिल लेंगे।" राजा और युवराज ने कहा, और फिर वे वहां से लौट पड़े।

रास्ते में राजा ने विजय से कहा, "अभी

हमने जिस लड़की को देखा था, वह मुझे ठीक लगी। लेकिन तुम दूसरी लड़की भी देखना चाहते हो, इसलिए हम कल फिर यहां आ जायेंगे।"

"इसकी ज़रूरत नहीं, पिताजी," विजय ने कहा। "अपनी मां से इस कदर गालियां खाने वाली लड़की को देखने की कोई ज़रूरत नहीं।"

अगले दिन राजा के सैनिक वहां जंगल में आये और लकड़हारे के परिवार को राजसी सम्मान के साथ राजधानी लिवा ले गये। जब वे राजमहल में पहुंचे, और जब दुर्गा को असलियत का पता चला तो उसने कृतज्ञता से चंपा के हाथ थाम लिये और उससे माफी मांगते हुए बोली, "मुझसे बहुत बड़ी गलती हुई, बेटी। मुझे क्षमा कर दो। मैं तुम्हें बहुत सताती रही। मेरी ईर्ष्या और स्वार्थ का मुझे फल मिल गया है। तुम अपनी अच्छाई पर अडिग रही और सहनशीलता की मूर्ति बनी रही। उसी के कारण अब तुम इस देश की महारानी कहलाओगी। पूनम की रात के प्रेत की कृपा से चुन्नी के लिए काफी सिक्के इकट्ठे हो गये हैं। उसकी किसी लकड़हारे से शादी करने के बजाय मैं उसकी किसी लकड़ी के व्यापारी से शादी करने में समर्थ हूं।"

दुर्गा यह कह तो गयी लेकिन उसके स्वर में असीम द:ख झलक रहा था।

चंपा ने उसे सांत्वना दी और बोली, "यह तुम क्या कह रही हो, मां? अपनी छोटी बहन के लिए अच्छे से अच्छा रिश्ता ढूंढ़ना मेरी ज़िम्मेदारी है।"

युवराज विजय ने भी मां-बेटी के बीच चल रही इस बातचीत को सुन लिया था। कहने लगा, "मैं इस देश का भावी राजा हूं। मेरी होनेवाली पत्नी की बहन से कोई ऐरा-गैरा विवाह करे, यह कैसे हो सकता है। उसका विवाह भी किसी राजकुमार से ही होगा।"

फिर उसने दुर्गा की ओर देखते हुए कहा, "आप चिंता मत करें, मां जी। चुन्नी के विवाह की जिम्मेदारी मुझ पर है। यह विवाह भी किसी राजकुमार से ही होगा।"

युवराज विजय की बात सुनकर दुर्गा बहुत खुश हुई और चुन्नी का चेहरा भी इस आश्वासन से खिल उठा।
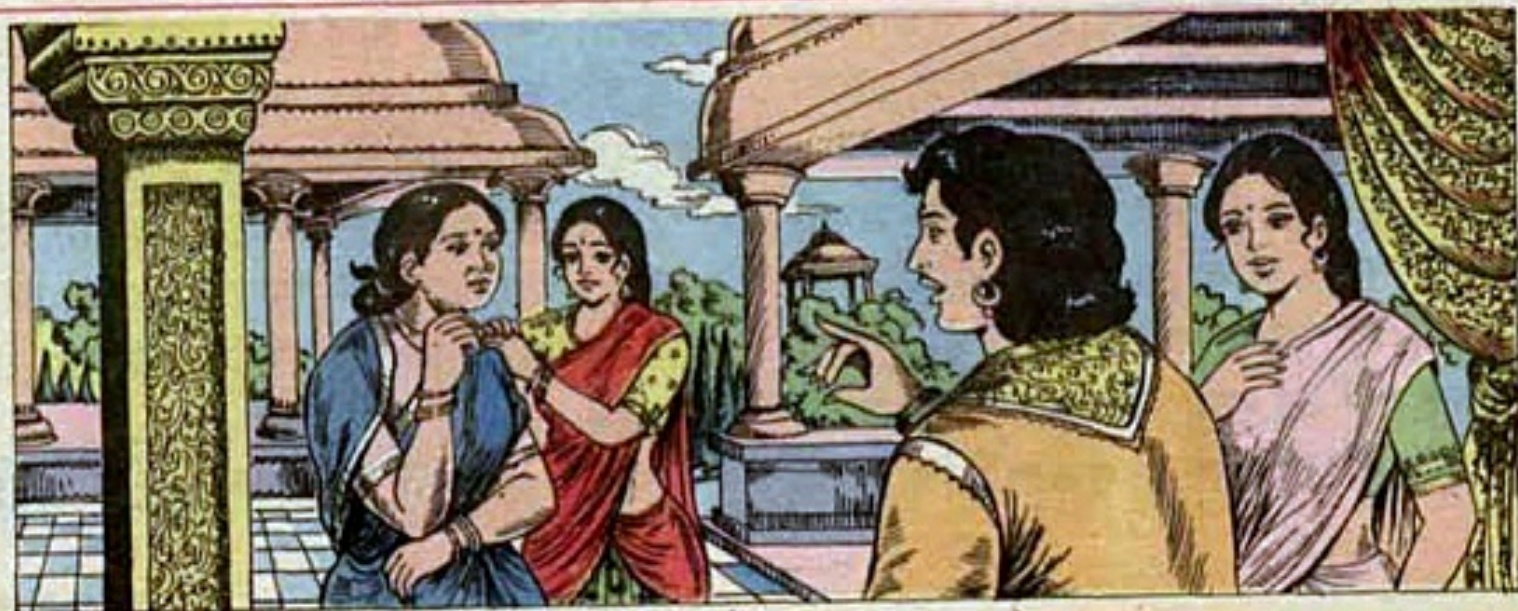
चंदामामा की खबरें

कोलंबस नहीं, फाह्यान

दुनिया में तो ऐसा विश्वास किया जाता है कि आज से पांच सौ वर्ष पहले जिसने अमरीका की खोज की थी, वह इटली का नाविक क्रिस्टोफर कोलंबस था । इस ऐतिहासिक घटना को मनाने के लिए पिछले वर्ष १२ अक्तूबर को विश्व की कई राजधानियों में उत्सव भी आयोजित हुए । इन उत्सवों को खत्म हुए अभी एक महीना भी नहीं बीता था कि अमरीका से आने वाले एक चीनी अनुसंधानकर्त्ता लियानशून ने यह घोषित किया कि कोलंबस से १००० वर्ष पहले ४१२ ई. में एक भिक्षु ने यपोटी के साम्राज्य में पांव रखा था । यह भिक्षु बौद्ध उपदेशों की खोज में चौथी शताब्दी में भारत भी आया था । अनुसंधानकर्त्ता के अनुसार यपोटी अमरीका के पश्चिमी तट पर आज के लॉस एंजल्स के निकट स्थित था । उसने यह दावा एक अंतर्राष्ट्रीय गोष्ठी में किया, और इसकी पुष्टि, चीन के एक पुस्तकालय में मिली १५०० वर्ष पुरानी एक आत्मकथा से उद्धरण देकर की ।

याद्दाशत का कमाल

इस वर्ष गणतंत्र दिवस को कौन सा दिन था? मंगलवार । पहली जनवरी को कौन सा दिन था? शुक्रवार । फिर पहली जनवरी १९९० को कौन सा दिन था? नहीं, नहीं, पुराना कैलेंडर देखने की ज़रूरत नहीं । ईरोड का पांच-वर्षीय अनीश नटराजन ही तुम्हें बता देगा कि उस रोज़ सोमवार था । इसीलिए अब उसे "कैलेंडर बालक" के नाम से पुकारा जाने लगा है । अब देखना यह है कि आने वाले दिनों में वह अपनी इस बुद्धि के चमत्कार को कहां तक कायम रखता है, या उसे बढ़ाता है ।

दक्षिणी ध्रुव को अकेला ही

जब नॉर्वे का 'अरलिंग कागे' स्की करता हुआ १९९० में उत्तरी ध्रुव पहुंचा तो उसके साथ उसका एक मित्र था । ५० दिन तक अकेले ही स्की पर चलते रहने के बाद २९-वर्षीय यह साहसी वकील इसी वर्ष जनवरी के पहले सप्ताह में दक्षिणी ध्रुव पहुंचकर वहां अकेला पहुंचने वाला पहला व्यक्ति बन गया है । १,३१० किलोमीटर की यह यात्रा इसने नियत समय से १० दिन पहले खत्म कर ली है । औसतन वह एक दिन में २६ किलोमीटर का फासला तय करता था । अपने साथ वह ज़रूरी सामान से लदी १२० किलोग्राम वज़न की एक गाड़ी भी खींचता था ।

भोला गड़रिया

एक गांव में एक गड़रिया रहता था। वह भोला था। वह अकेला भी था। एक दिन उस गड़रिये को हाट में कुछ काम पड़ा। उसकी भेड़ों की देखरेख करने वाला कोई नहीं था, उसने यह काम ईश्वर पर छोड़ दिया, हाट के लिए निकल पड़ा।

वह कुछ ही दूर गया था कि उसे एक जान-पहचान का व्यक्ति दिखाई दिया। उस व्यक्ति ने पूछा, "भैया, कहां जा रहे हो?"

"हाट में कुछ सामान खरीदना था, मैं वहीं जा रहा हूं।" गड़रिये ने कहा।

"तुम्हारी भेड़ों की देखभाल कौन कर रहा है?" उस आदमी ने जानना चाहा।

"न मेरा कोई भाई-बंधु है, न कोई एसा पड़ोसी ही है। ईश्वर पर ही छोड़ आया हूं।" गड़रिये ने कहा और आगे बढ़ गया।

'चलो, हम भी देखते हैं ईश्वर तुम्हारी भेड़ों की कहां तक देख-रेख करता है।' यह कहकर वह व्यक्ति आगे बढ़ गया।

उसने गड़रिये के रेवड़ को जा घेरा और उसमें से बीस बढ़िया भेड़ों को हांककर अपने यहां ले गया।

गड़रिया जब हाट से लौटा तो उसे यह समझते देर न लगी कि उसके रेवड़ में से बीस भेड़ें ग़ायब हैं। इस पर वह बहुत दुखी हुआ, और उसने मन ही मन फैसला किया कि आइंदा वह भेड़ों की रखवाली का काम ईश्वर पर नहीं छोड़ेगा।

अब उसने अपनी भेड़ों की रखवाली के लिए दो कुत्ते खरीद लिये थे। जिसने उसे वे कुत्ते बेचे थे, वह बोला था कि कुत्तों को रोज केवल एक-एक चूहा खिला दे और उसने एक अच्छी खासी रकम उससे ऐंठ ली थी। तब से वह गड़रिया उन कुत्तें को रोज़ एक-एक चूहा खिला देता था।

पर कुत्तों के आने के बाद भी गड़रिये को

२५ वर्ष पूर्व चंदामामा में प्रकाशित कहानी

नुकसान उठाना पड़ रहा था, क्योंकि वहां अब रात के समय भेड़िये आ जाते थे जो रेवड़ में से भेड़ों को घसीटकर ले जाते थे। कुत्ते, बस, उन्हें देखते रह जाते, जब भेड़िये अपना पेट भर लेते तो बचे-खुचे मांस को कुत्ते चट कर जाते।

कुछ दिन बीतने पर गड़रिये को पता चला कि उसके रेवड़ में से अब भी भेड़ें ग़ायब हो रही हैं। वह फिर दुखी हो उठा और सोचने लगा कि अगर हालत यही रही तो अगली संक्रांति तक उसके रेवड़ में एक भी भेड़ नहीं बचेगी। यह सोच-सोचकर वह इतना दुखी हुआ कि उसकी आंखों से आंसू बह निकले।

तभी एक बूढ़ा उधर से गुज़रा। उसने गड़रिये को ऐसी हालत में देखकर पूछा, "क्या हुआ, बेटे? तुम इस तरह रो क्यों रहे हो? क्या कोई संकट आ पड़ा है?"

"रोऊं नहीं तो क्या करूं!" गड़रिये ने अपने भोलेपन में कहा, "ईश्वर पर भरोसा करके मैं अपने रेवड़ को उसक हवाले कर गया था, क्योंकि मुझे हाट में जाना पड़ा था। वहां से लौटा तो देखा कि रेवड़ में से किसी ने बीस भेंड़ें चुरा ली हैं। ईश्वर उसे देख रहा था, लेकिन उसने किया कुछ नहीं। फिर मैंने रेवड़ की रखवाली के लिए दो कुत्ते खरीदे, लेकिन हालत वही की वही रही। अब उनका मेरे पास रहना या न रहना एक जैसा लग रहा है। रोज रात को भेड़िये एक-दो भेड़ें मारकर खत्म कर देते हैं, और ये कुत्ते उन पर एक बार भी नहीं भौंकते।"

"कुत्तों को क्या खिला रहे हो, मेरे भोले बच्चे?" उस बूढ़े ने प्रश्न किया ।

"दोनों को हर रोज़ एक-एक चूहा खिलाता हूं । उन्हें बेचने वाले ने मुझसे यही कहा था । लेकिन अब तो इन्हें इतना भी खिलाना बेकार लग रहा है ।" गड़रिये ने बहुत गुस्से से कहा ।

"अच्छा, तो यह बात है । इसीलिए तुम्हारी यह हालत हो रही है! क्या कभी एकाध भेड़ इन कुत्तों को भी खिलाते हो? इन्हें भरपेट खिलाओ । इन्हें भूखा मत रहने दो । तुम अपना काम ठीक से करो, फिर देखना ये कुत्ते भी अपना काम कितनी मुस्तैदी से करते हैं ।" बूढ़े ने सलाह दी ।

उस दिन से गड़रिया अपने कुत्तों को भरपेट खिलाने लगा । इधर कुत्तों को भरपेट खाने को मिला, उधर रेवड़ से भेड़ों का गायब होना बंद हो गया । पहले दिन तो भेड़िये नहीं आये, लेकिन दूसरे दिन जब दो भेड़िये एक साथ आये, तो कुत्तों ने उन पर भौंकना शुरू कर दिया । फिर उन कुत्तों में से एक कुत्ता बोला, "जाओ, जाओ । अब हमें तुम्हारी जूठन खाने की ज़रूरत नहीं । हमारा मालिक हमें भरपेट खाने को देता है ।"

"नहीं, नहीं, तुम्हें जाने की ज़रूरत नहीं । जैसे चलता आ रहा है, वैसे ही चलने दो । तुम अपना पेट भर लो, फिर हमें भी कुछ खिला देना," दूसरे कुत्ते ने कहा ।

भेड़िये सोच में पड़ गये । आज तक कुत्ते उन पर कभी नहीं भौंके थे । लेकिन अब वे उन पर भौंक रहे थे और अलग-अलग ढंग से बात कर रहे थे । उन्होंने अब तक उन पर कभी हमला भी नहीं किया था । इसलिए दूसरे कुत्ते की बात पर भेड़िये विश्वास कर बैठे, और इसी विश्वास के सहारे वे रेवड़ की ओर बढ़े ।

कुत्ते तो अब इसी मौके की ताक में थे । वे भेड़ियों पर शेरों की तरह टूट पड़े और देखते ही देखते उन्होंने उन्हें पूरी तरह से चीर-फाड़ डाला ।
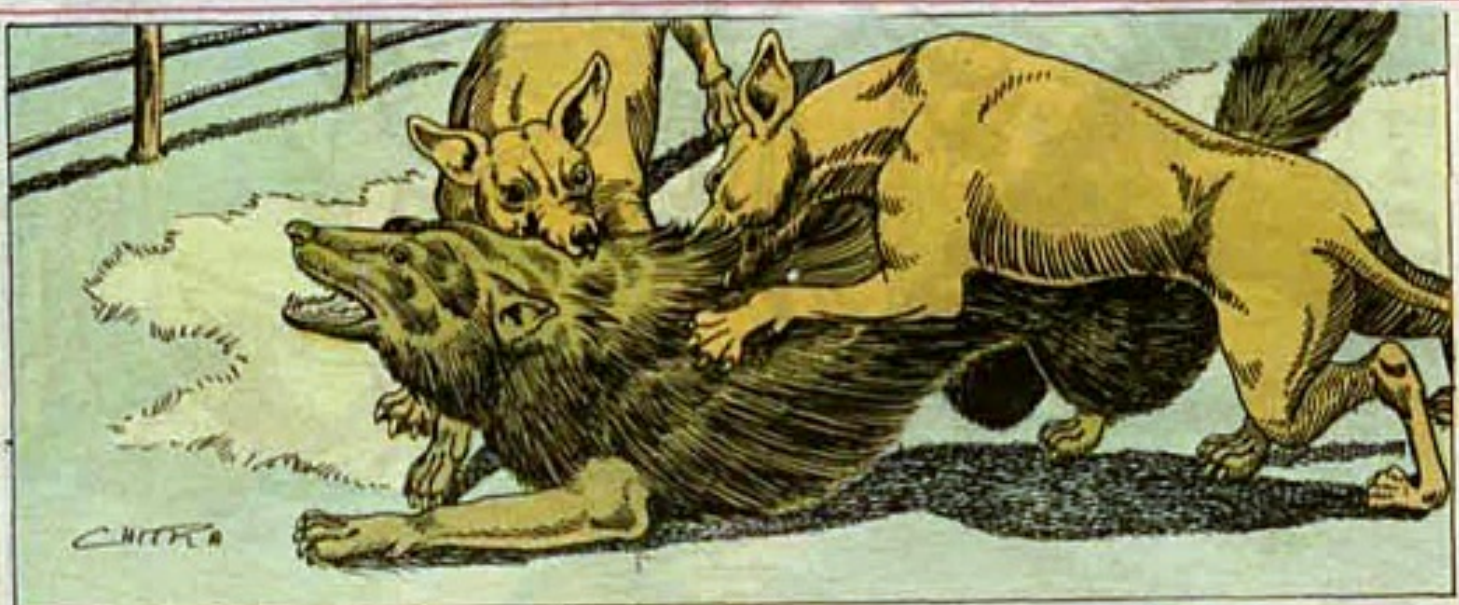
बाघ के दिन लद गये

यह बाघ परियोजना के कारण ही संभव हो पाया कि भारत में बाघों की संख्या १८०० से ४३०० तक जा पहुंची । यह परियोजना सरकार ने २० वर्ष पहले शुरू की थी । यह जीवन देश में फैले १७ अभयारण्यों में पाया जाता है । किंतु इन अभयारण्यों में इधर शिकारी काफी मात्रा में चोरी-छिपे घुसने लगे हैं और कई जानवरों की हत्या कर रहे हैं । ऐसी घटनाएं इस उप-महाद्वीप के नेपाल, भूटान तथा बंगलादेश जैसे दूसरे देशों में भी हो रही हैं । इन चार देशों में संसार के कुल बाघों की संख्या का ६० प्रतिशत पाया जाता है । सह संख्या ७,००० से ८,००० के बीच है । दिसंबर के महीने में दिल्ली में पर्यावरण विशेषज्ञों का एक अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन हुआ था । उन विशेषज्ञों का यह कहना था कि जब तक कोई कड़ी कार्यवाही नहीं की जाती, हो सकता है २०२० तक सभी बाघ खत्म हो जायें, और केवल वही बचें जो जंतुशालाओं में रहते हैं ।

नामोनिशान मिटने का डर

बाघ के अलावा स्तनपायी जीवों, पक्षियों, रेंगने वाले जीवों, धरती और जल में रहनेवाले जीवों और अनेक प्रकार के कीड़ों की भारत में लगभग १५० प्रजातियां हैं जिनके खत्म हो जाने का डर है । इस सूची में सबसे ऊपर हैं सिंह, हाथी, जंगली गधा, गैंडा, सिंह की पूंछ वाला बंदर तथा इंडस नाम की डॉल्फिन मछली । ये तमाम प्रजातियां समूचे भारत में फैली हैं । इससे यह पता चलता है कि किन्हीं खास-खास भागों में ही इन्हें खत्म नहीं किया जा रहा । अगर लोगों ने प्रकृति के साथ मिलकर जीना नहीं सीखा तो जल्दी ही हमारे इन सभी मित्रों का नामोनिशान मिट जायेगा ।

विनाश सिद्धांत

क्या तुम जानते हो कि इस धरती से डायनासौर के ग़ायब होने के कारण "प्रभाव सिद्धांत" (इंपैक्ट थ्योरी) है । कुछ वैज्ञानिकों के अनुसार आज से ४ लाख वर्ष पूर्व एक ज्वालामुखी का विस्फोट हुआ था जिससे भारत के "दक्खन" कहलाने वाले क्षेत्र में हजारों घन किलोमीटर पिघली चट्टानें जमा हो गयी थीं, और इसी से डायनासौर का विनाश हुआ । कुछ समय पहले किन्हीं वैज्ञानिकों को मैक्सिको में १७० किलोमीटर चौड़ा एक गड्ढा मिला जो एक बहुत बड़े पुच्छल तारे के गिरने के कारण बना था । इस गड्ढे से मिली चट्टानों की रासायनिक जांच करने से जिस काम का अनुमान हुआ है, उससे एक नया सिद्धांत सामने
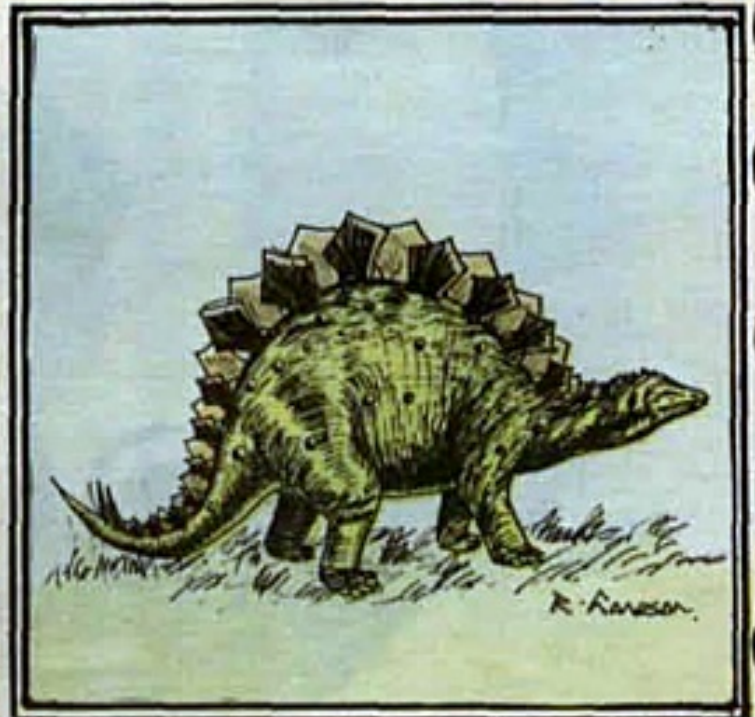
आया है । इस सिद्धांत के अनुसार ६ करोड़ ५० लाख वर्ष पहले जो धमाका हुआ था, उसीसे उस समय सभी प्रजातियों के जीवों के ७० प्रतिशत का विनाश हुआ । लगता है अब मानवीय क्रूरता का स्थान ज्वालामुखियों और धमाकों ने ले लिया है ।

अब, अपने बेटे को दीजिए
संसार की सबसे बढ़िया बंदूक का
बिलकुल असली जैसा मॉडल.

फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता :: पुरस्कार १००)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां जून, १९९३ के अंक में प्रकाशित की जाएँगी ।

M. Natarajan

Anant Desai

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियां एक शब्द या छोटे वाक्य में हों । ★ १० अप्रैल'९३ तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए । ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) रु. १००-/ का पुरस्कार दिया जाएगा । ★ दोनों परिचयोक्तियां केवल कार्ड पर लिखकर इस पते पर भेजें : **चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास-२६.**

फरवरी.१९९३ की प्रतियोगिता के परिणाम

पहला फोटो : **सुख शांति का सुंदर सपना!**

दूसरा फोटो : **सारा नील गगन है अपना!!**

प्रेषक : हरीश चन्द्र भट, फिटवेल इंजनियरिंग इंडस्ट्रीस, ११ सुभाष रोड, जोगेश्वरी (पूर्व) , बम्बई-४०००६०

पुरस्कार की राशि रु. १००/- इस महीने के अंत में भेजी जाएगी ।

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

Ishq mera mazhab hai. Rasna Mera Drink Hai.

Yesterday at my school drama, I was like Amitabh Bachchan as in 'Khuda Gawah'. And everyone clapped and applauded. And when I came home you know what Mummy asked? 'So little ustaad, what do you want to drink?' You know what I said? 'Ishq mera mazhab hai, Rasna Mera Drink Hai.' And then I drank up the whole jug of pyaara Rasna...

I Love You Rasna

More Taste — More Fun

Mudra: EAMR: 6641